ओ३म्

परिवार और समाज के नवनिर्माण का मासिक

शांतिधर्मी

फरवरी, 2015

२७ जनवरी को चौ. मित्रसेन आर्य की चतुर्थ पुण्यतिथि पर विद्वत् सम्मान समारोह का आयोजन किया गया। मुख्यमंत्री श्री मनोहरलाल हरियाणा सरकार व परममित्र संस्थान के अध्यक्ष कैप्टन रूद्रसेन सिन्धु से स्व. पंडित चन्द्रभानु आर्य (मरणोपरान्त) का सम्मान ग्रहण करते हुए पंडित जी के सुपुत्र श्री रमेश चन्द्र आर्य।

₹10

स्व. पं. चन्द्रभानु आर्य : संस्मृतियाँ

२००३ में नागपुर में आर्य सेवक शताब्दी समारोह, आचार्य जगत् देव नैष्ठिक, ब्र. नन्दकिशोर जी से 'सम्पादकश्री' सम्मान ग्रहण करते हुए।

रोहतक में सार्वदेशिक आर्ययुवक परिषद के कार्यक्रम में तत्कालीन मुख्यमंत्री चौ. भूपेन्द्र सिंह हुड्डा से सम्मान ग्रहण करते हुए।

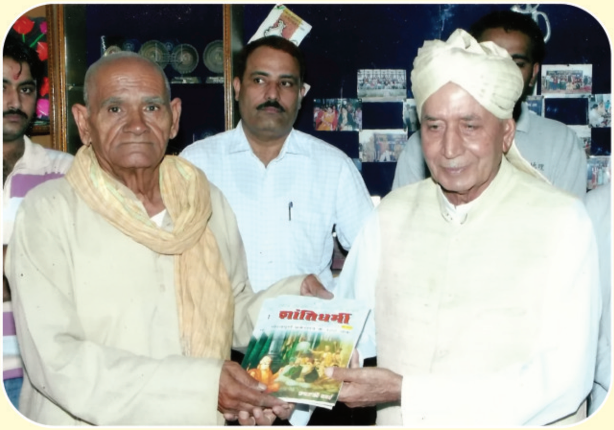

शान्तिधर्मी के १००वें अंक का लोकार्पण : स्व. चौ. मित्रसेन आर्य के साथ।

शान्तिधर्मी के ५०वें अंक का लोकार्पण : पूर्व मंत्री चौ. हरिसिंह सैनी व डॉ. धर्मदेव विद्यार्थी के साथ।

महाश्य हीरालाल स्मृति समारोह, आर्य समाज बीकानेर गंगायचा अहीर रेवाड़ी के पदाधिकारीगण सम्मानित करते हुए।

आर्य समाज बीकानेर राजस्थान, सम्मान ग्रहण करने के पश्चात डॉ. देव शर्मा व पदाधिकारियों के साथ।

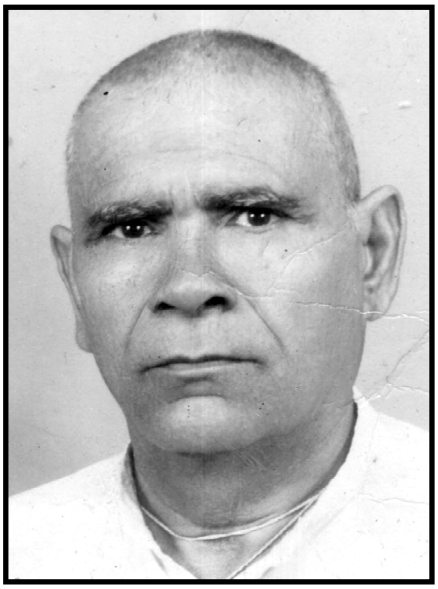

संस्थापक एवं आद्य सम्पादक

पं० चन्द्रभानु आर्य

सम्पादक : सहदेव समर्पित
(चलभाष ०९४१६२-५३८२६)

उपसम्पादक : सत्यसुधा शास्त्री

प्रबंध संपादक : सुभाष श्योराण

आदरी सम्पादक : यज्ञदत्त आर्य

सह-सम्पादक : राजेशार्य आट्टा
डॉ० विवेक आर्य
नरेश सिहाग बोहल

सहयोग : आचार्य आनन्द पुरुषार्थी
श्रीपाल आर्य, बागपत
महेश सोनी, बीकानेर
भलेराम आर्य, सांघी
कर्मवीर आर्य, रेवाड़ी

विधि परामर्शक : जगरूपसिंह तंवर

कार्यालय व्यवस्थापक : रविन्द्रकुमार आर्य

कम्प्यूटर सज्जा : बिशम्बर तिवारी

सहयोग राशि

एक प्रति	:	१०.०० रु०
वार्षिक	:	१००.०० रु०
आजीवन	:	१०००.०० रु०

ओ३म्

शं नो मित्रः शं वरुणः शं नो भवत्वर्यमा।

शान्तिधर्मी

फरवरी, २०१५

वर्ष : १७ अंक : १ फाल्गुन २०७१ विक्रमी
सष्टि संवत्-१९६०८५३११५, दयानन्दाब्द : १९२

क्या? कहाँ?....

आलेख

शांतिप्रवाह ४
श्रद्धांजलियाँ/संस्मरण ८
गुरुजनों का पुण्य स्मरण (आत्मकथ्य) १२
संस्कृत भाषा पर आक्षेप क्यों? १४
सत्यार्थप्रकाशः एक कालजयी ग्रंथ (दयानन्द जयन्ती) १८
वेद भाष्यकार के रूप में अनुपम भेंट २०
अहिंसा और हिंसा का सत्य (आध्यात्मिक-चिन्तन) २१
लस्सी में गुण बहुत हैं (स्वास्थ्य चर्चा) २४

कविताएँ : डॉक्टर महाश्वेता चतुर्वेदी, दाताराम आर्य, डी सी विकास, कुसुम, आनन्द प्रकाश आर्य

स्थायी स्तम्भ : आपकी सम्मतियाँ-६, बाल वाटिका-२६, भजनावली-२९, अनुशीलन सामवेद आग्नेय पर्व-३४

जो सत्य आचरण करता है उसी ने सत्य को पाया है। जिसने सत्य को प्राप्त कर लिया वह सत्य आचरण किए बिना रह ही नहीं सकता। -चन्द्रभानु आर्य

कार्यालय :

७५९/३, आदर्श नगर, सुभाष चौक,
जीन्द–१२६१०२ (हरियाणा)
दूरभाष : ९४१६२–५३८२६
ई-मेल-shantidharmijind@gmail.com

पूर्ण सम्पादक मण्डल अवैतनिक है। पत्रिका में व्यक्त लेखकों के विचारों से सम्पादक मण्डल का सहमत होना अनिवार्य नहीं है। किसी भी प्रकार के विवाद का न्याय क्षेत्र जीन्द होगा।

शान्ति प्रवाह

❒स्व० पं० चन्द्रभानु आर्य

समष्टि, व्यष्टि से ही बनती है-और समाज का निर्माण व्यक्ति के निर्माण से ही होता है। यदि व्यक्ति अव्यवस्थित है तो समाज व्यवस्थित नहीं हो सकता। हम व्यक्ति, खासकर के भारत के लोग, जन्म लेते ही, किसी न किसी धर्म से जुड़े होते हैं, अबोध शिशु पर उसके जन्म लेने से पहले ही किसी न किसी धर्म का ठप्पा लग जाता है। इससे पहले कि वह अपने आस-पड़ौस नाते- रिश्तेदारों के नाम आदि को जानता है, उससे पहले ही उसकी पहचान उसके माता-पिता के धर्म से होने लगती है। लेकिन व्यक्ति निर्माण फिर भी अधूरा रहता है। क्या कारण है कि समाज की इकाई होते हुए भी व्यक्ति समाज पर भार बन जाता है। आज के भीड़ तंत्र में व्यक्ति स्वयं ही समाज का शोषक बनता जा रहा है, इस पर भी उसको न तो स्वयं मानसिक शांति व संतोष मिलता है और न ही समाज को कोई लाभ मिलता है।

ऐसा लगता है जैसे हमने समाज को एक निर्जीव वस्तु- समझ रखा हो, व्यक्तियों का समूह नहीं, तभी तो जागरूक मनुष्य भी समाज के सुधार की बात तो करते हैं, व्यक्ति के निर्माण की नहीं। जैसे कोई मकान बनाने वाला चाहता हो कि ईंट लगे न गारा सीमेंट, मकान बन जाए। भागदौड़ और दौड़धूप में व्यस्त साधारण से साधारण व्यक्ति भी सामाजिक व्यवस्थाओं पर चीखता-चिल्लाता और झल्लाता मिल जाएगा। लेकिन प्रत्येक व्यक्ति यह सोचता है कि समाज उसको छोड़कर बाकी सबका नाम है। खान पान बिगड़ गया, व्यवहार बिगड़ गया-आपसी सम्बन्ध हल्के हो गए-ईमानदारी- विश्वास खत्म हो गया-कुछ नहीं बचा; इस प्रकार की बात वही व्यक्ति करते मिल जाएँगे-जो स्वयं इन दोषों के भागीदार हैं। धर्म की लम्बी चौड़ी व्याख्याएँ करने वाले उपदेशकों को यह समझ लेना चाहिए कि उनके इतने प्रयासों के बावजूद आज व्यक्ति को धर्म व भगवान् तभी याद आता है, जब या तो वह किसी मुसीबत में फँसा हो या सौगन्ध खाकर अपने किसी दोष को ढकना, छुपाना चाहता हो।

लोगों को अपने-अपने बाड़ों में बंद करने के प्रयास का नाम आज के युग में धर्म प्रचार है। बड़े-बड़े भाषणों, सत्संगों, धार्मिक समारोहों से व्यक्ति का निर्माण नहीं होता। ये भाषण, व्याख्यान, प्रवचन, सत्संग व्यक्ति के संस्कारों के पहरेदार का काम तो कर सकते हैं-कई बार बहुत प्रबल शुभ कर्मों के जीव जिनके संस्कार प्रसुप्त होते हैं-उपदेश सुनकर बदल जाते हैं-पाठकों को संभवतः जानकारी होगी कि हरियाणा में-उपदेशों से प्रभावित होकर अपने जीवन में आमूल-चूल परिवर्तन लाने वाले डाकुओं ने अपना सर्वस्व जमीन-जायदाद समाज को अर्पित कर दिया-अपनी खेती की जमीन पर गुरुकुल खुलवाए। लेकिन यह बहुत कम और असाधारण मामले होते हैं-वस्तुतः तो व्यक्ति का निर्माण उसके जन्म लेने से पहले ही शुरू हो जाता है। माता के गर्भ में उसकी संस्कार संरचना प्रारम्भ होती है। वैसे तो जीव अनादि है और इसके संस्कार भी अनादि हैं, लेकिन पुराने संस्कार प्रायः नए संस्कारों के नीचे दबे रहते हैं।

व्यक्ति का निर्माण क्या करना है, उसके उपयोगी संस्कारों को जाग्रत करना है। यह काम माता-पिता और आचार्य को करना होता है। समाज का चरित्र निर्माण व्यक्तियों के पारस्परिक चरित्र निर्माण पर टिका होता है। माता-पिता योग्य- चरित्रवान होंगे तो बालक होंगे। जो शिक्षा बालक को मिलनी चाहिए उसके बारे में माता-पिता को न तो जानकारी है और न ही इधर कोई रूचि है।

व्यक्तिगत धर्म के अभाव में ही समाज धर्म की हानि होती है। व्यक्ति निर्माण ही समाज का निर्माण है। व्यक्ति निर्माण की बहुत सुन्दर और व्यवस्थित योजना हमारे पूर्वजों ने दी है, जिसको आज अधिकांशतः उपेक्षित ही कर दिया गया है। इसी कारण सामाजिक समस्याओं का जन्म हो रहा है। व्यक्ति के अन्दर के ईर्ष्या, द्वेष, छल-कपट ही सामाजिक रूप से अतिवाद, आतंकवाद और वर्गवाद बनते हैं। सहनशीलता की शिक्षा के बिना समरसता कहाँ से आयेगी और ये मानवीय संवेदनाएँ तथाकथित धर्मों की शिक्षा के नीचे दबाई जा रही हैं। यदि व्यक्ति को वास्तविक मानवीय धर्म की शिक्षा नहीं दी जायेगी तो वह समाज के कल्याण की बात सोचेगा भी कैसे? **(मई २००२)**

अपनी बात

शांतिधर्मी सतरहवें वर्ष में प्रवेश कर गया। ये सोलह वर्ष देखते देखते व्यतीत हो गए। जब १९९९ में एक छोटे से समारोह में शांतिधर्मी की शुरुआत की गई थी, ऐसा लगता है कि जैसे कल की ही बात है। जिस सहजता और सरलता से पूज्य पिताजी ने इसे प्रारम्भ किया था, उसी सहजता से इसका प्रकाशन और सम्पादन किया। वे स्वभाव से ब्राह्मण थे। सद्‌विचारों का प्रचार करना उनकी सहज वृत्ति थी। शांतिधर्मी भी इसी सहज वृत्ति का परिणाम है।

किसी कार्य की सफलता का आकलन करने की यही एक कसौटी है कि उस कार्य के क्या लक्ष्य निर्धारित किये गए थे और वे किस मात्रा में प्राप्त किये जा सके! उनका उद्‌देश्य धन कमाना नहीं था; शांतिधर्मी के प्रारम्भ के समय उनके एक मित्र ने सुझाव दिया था- 'यदि पत्र निकालना लाभ का सौदा होता तो बहुत से धनाढ्य लोग बैठे हैं, वे ही इस प्रकार का कार्य करते।' पर धन के प्रति उनका दृष्टिकोण अलग ही था। यदि आर्थिक लक्ष्य होता तो शांतिधर्मी की यह निरन्तरता संभव नहीं थी। इस बात को इस प्रकार के पत्र निकालने वाले व्यक्ति और संस्थाएँ भली-भांति जानते हैं।

कोई पद प्रतिष्ठा की चाह भी नहीं थी, वे किसी समाज के प्राथमिक सदस्य तक नहीं थे। जहाँ तक हमने समझा- उन्होंने कभी यह भी नहीं सोचा कि वे योगेश्वर कृष्ण या योगेश्वर दयानन्द की तरह दुनिया को बदल देंगे। उनका दृष्टिकोण केवल अपने कर्त्तव्य का निर्वहन करना था, 'कुर्वन्नेवेह कर्माणि--' को उन्होंने आत्मसात् किया था। और 'मा फलेषु कदाचन' का भाव उनके हृदय में विराजमान था। अपनी ओर से जितना योगदान हो सकता है, वह पूर्ण करना और ईश्वर की व्यवस्था में निश्चिंत रहना-- यही उनका उद्‌देश्य था। इस दृष्टिकोण से देखा जाए तो उनका यह पत्र का प्रकल्प पूर्णतया सफल है और इसकी सफलता इसकी निरन्तरता में निहित है।

सम्पादक के रूप में उनकी नीति अत्यंत स्पष्ट थी। किसी प्रकार के आपसी विवादों को उन्होंने प्रचारित नहीं किया। पाठक को सकारात्मक विचार चाहिएँ। नकारात्मक बातों के लिए तो अन्य अनेक प्रकाशन, मीडिया बहुत हैं। साथ ही शांतिधर्मी में विविधता पूर्ण सामग्री उनके संपादन कौशल का दर्शन कराती है। शांतिधर्मी एक पूर्ण पारिवारिक पत्रिका बने। शांतिधर्मी के माध्यम से पाठकों को वह दिया जाए जो उनको अन्यत्र नहीं मिलता। उनके सम्पादन का ही परिणाम है कि शांतिधर्मी पूरे देश में पढ़ी जाती है और परिवार के सभी सदस्यों के लिए इसमें प्रेरक, पठनीय और मननीय सामग्री होती है।

रोहतक में एक कार्यक्रम में प्रसिद्ध क्रिकेटर नवजोतसिंह सिद्धू ने कहा था कि आदमी की जिन्दगी में दो मोड़ बहुत अहम होते हैं। एक- जब वह पिता बनता है और दूसरा- जब वह अपने पिता को खोता है। हमने इस दूसरे मोड़ को अनुभव किया है, जिसे प्रत्येक संवेदनशील मनुष्य अनुभव करता है। परमात्मा प्रत्येक मनुष्य को माता-पिता के रूप में एक अनुपम उपहार देता है और प्रत्येक मनुष्य एक दिन अपने माता-पिता को खोता भी है। वे लोग बहुत सौभाग्यशाली होते हैं जो किसी वस्तु का मूल्य उसके खो जाने से पहले जान जाते हैं। (उनकी छोड़िये, जो खो जाने के बाद भी नहीं जान पाते) छुटपन में तो प्रत्येक बच्चा अपने पिता को हीरो समझता है, लेकिन जब चक्र घूमता है-- बाप छोटे (वृद्ध) हो जाते हैं और बेटे बड़े हो जाते हैं- तो उस समय उनको भी आप के साथ की आवश्यकता होती है। यदि माता-पिता के लिए सन्तान सबसे बड़ी सम्पत्ति है तो संतान के लिए माता-पिता भी सबसे बड़ी सम्पत्ति हैं। यह बात जिसको जितनी जल्दी समझ आ जाए उतना ही अच्छा है।

हमें पिता को खोने की गंभीरता का अहसास है। उनके जाने के बाद इस बात का अहसास हो रहा है कि लोग उनसे कितना प्यार करते हैं। दूरदराज से, जाने-अनजाने व्यक्ति, परिवार के परिवार-- दूरभाष पर या आमने-सामने संवेदना व्यक्त करते समय अब तक फूट-फूट कर रोने लगते हैं, तो उनके विराट् व्यक्तित्त्व का अनुमान सहज ही लगाया जा सकता है।

उन्होंने समाज को और परिवार को दिया ही दिया है, और जाने के बाद भी देते ही जा रहे हैं। शांतिधर्मी के रूप में उन्होंने एक परिपक्व फलदायी वृक्ष हमें दिया है। शांतिधर्मी के लिए हमारा भी लक्ष्य वही रहेगा जो उनका था। हम हमारे परिश्रम और पुरुषार्थ में कोई कमी नहीं आने देंगे। हमारे कंधे कमजोर भले हों, पर उनकी जगाई संकल्प की ज्योति मद्धिम नहीं होगी, जलती रहेगी। गुरुतर भार दायित्त्व का है, यह दायित्त्व बोध ही हमें प्रेरणा और शक्ति देगा।

-सहदेव समर्पित

आपकी सम्मतियाँ

शान्तिधर्मी का शारदीय संस्येष्टि विशेषांक प्राप्त हुआ। शान्ति प्रवाह में श्री चन्द्रभानु जी आर्य ने प्रकाशपर्व दीपावली की महत्ता पर विस्तार से प्रकाश डाला एवं सचेत किया कि मिट्टी के दीपक जलाते-2 एवं दीपावली पर्व मनाते-2 युग बीत गये पर जब तक हमारे अन्तर्मन में व्याप्त अंधकार, अविद्या एवं जड़ता का शमन नहीं होगा तक तक इस पर्व की महत्ता को नहीं समझ सकेंगे। श्री आर्य जी ने वेद की निंदा करने वालों को नास्तिक कहा क्योंकि वेद का निन्दक कभी ईश्वर भक्त नहीं हो सकता।

दीपावली पर्व पर आयोजित यज्ञ-हवन की लपटें उठने एंव सत्य-ज्ञान की ओर जाने को प्रेरित करती हैं। आज का शिक्षित वर्ग भी धर्म कर्म के मामले में बुद्धिमत्ता का परिचय नहीं देता। आज अज्ञान-अविद्या का प्रचार कम नहीं हो रहा। यह पर्व हमें बार-2 चेतावनी देता है कि अविद्या एवं पाखण्ड का भूत भगाकर प्रकाश का ऐसा दीपक जलायें जिससे उस महान ऋषि के सपनों तथा त्याग व बलिदान को साकार करने में सफल हो सकें।

स्वामी भीष्मजी ने भजन के माध्यम से काशी शाऱ्रार्थ का मार्मिक वर्ण किया है, जहाँ अविद्या का जाल बिछा हुआ था। पोप पण्डों एवं पुजारियों का एकमात्र उद्देश्य किसी बहाने ऋषि दयानन्द ऋषि की प्रतिष्ठा को धूमिल करना था,परन्तु ऋषि उनकी नब्ज को पहचान गये थे, एवं उन्हें शास्त्रार्थ में नतमस्तक कराया। स्वास्थ्य चर्चा में तिल के विभिन्न प्रकार से प्रयोग एवं उससे होने वाले लाभों के बारे में उपयोगी जानकारी दी गई है।

शान्तिधर्मी के सभी लेख, रचनायें, शिक्षाप्रद एवं ज्ञानवर्धक हैं। इन्हें पढ़कर एवं अपने जीवन में अपनाकर व्यक्ति अपने जीवन का निर्माण कर सकता है।

प्रकाशचन्द्र अग्रवाल,
द्वारा मनीष ट्रेडिंग कम्पनी
नेहरु रोड, पो. सिलीगुड़ी, जि. दार्जिलिंग (प.बं.)

शांतिधर्मी करा (अप्रैल २०१४) अंक देखा, पढ़ा और समझा, जिसमें बड़े ही मार्मिक ढंग से दृष्टि डाली गई है। इस पूरी किताब का मैंने अध्ययन किया, जिसमें मानव जाति को धर्म के बारे में सदुपदेश दिया गया है। वास्तव में जो इसको अपना लेगा उसको सुख तो मिलेगा ही, साथ ही साथ उसका जीवन धन्य हो जाएगा। 'शांतिप्रवाह' (सुख का मूल धर्म) के अन्तर्गत सम्पादक श्री चन्द्रभानु आर्य का लेख बहुत ही अच्छा है और आध्यात्मिक दृष्टिकोण से पूर्ण, ज्ञानवर्धक एवं लाभकारी है, जिसमें धर्म के बारे में दृष्टिपात किया गया है।

श्यामनारायण चौहान
ग्रा. विशुनपुरा, पोस्ट-मथेला, जिला चन्दौली

उनकी प्रेरणादायक बातें हमेशा याद आती रहेंगीं।

मुझे नानाजी के सान्निध्य में रहने का बहुत ज्यादा अवसर मिला। मेरा जन्म नानाजी के घर के आँगन में हुआ। करीब पाँच साल तक नानाजी के द्वारा ही पालन-पोषण होता रहा। इसलिए नानाजी के परिवार की संस्कारों की छाप मुझ पर भी पड़ी। मेरे जन्म के समय नानाजी ने पं. ईश्वर चन्द्र शास्त्री के द्वारा मेरा नामकरण संस्कार करवाया। मेरा नाम नरेन्द्र रखा गया। नानाजी ने मेरे नाम का स्पष्टीकरण किया- नरों मे इन्द्र। नामकरण से लेकर यज्ञोपवीत संस्कार तक नानाजी के द्वारा हुए। जब भी नानाजी अकेले होते मुझे पास बैठाकर अच्छी अच्छी बातें बताते और अच्छी पुस्तकें पढ़ने के लिए प्रेरित करते। मेरी सफलता पर नानाजी बहुत खुश होते और ढेरों आशीर्वाद देते। कड़ी मेहनत करने की प्रेरणा देते।

मेरे गांव में नानाजी का काफी प्रभाव था। नानाजी के समय के वृद्ध बताते हैं-भाई तेरे नाना का 30-35 वर्ष पहले प्रचार हुआ करता था। क्या ओजस्वी वाणी थी बगैर लाउड स्पीकर दूर तक उनका प्रचार सुना करता था। मैं गौरव महसूस करता हूँ कि जब गांव के मौजिज व्यक्ति मुझे मेरा परिचय पूछते हैं और कहते हैं अच्छा तू चन्द्रभान का दोहता है। आज नाना जी हमारे बीच नहीं हैं, लेकिन उनकी प्रेरणादायक बातें हमेशा याद आती रहेंगीं।

-**आर्य नरेन्द्र सोनी** (दौहित्र) ग्राम बिठमड़ा, जिला हिसार

चन्द्रभानु आर्य : व्यक्तित्त्व और कृतित्त्व

शांतिधर्मी के संचालक और प्रधान सम्पादक व आर्यजगत् के महान् भजनोपदेशक श्री पण्डित चन्द्रभानु आर्य के विराट् व्यक्तित्त्व को जानने और जनाने के लिए 'चन्द्रभानु आर्य : व्यक्तित्त्व और कृतित्त्व' बृहदाकार ग्रंथ पर पिछले एक वर्ष से कार्य चल रहा है। इस ग्रंथ में पण्डित जी की रचनाओं, जीवन यात्रा, संस्मरणों; साहित्यकार, कवि और उपदेशक के रूप में उनके योगदान पर प्रकाश डाला जाएगा। उनके सभी परिचितों, मित्रों, सहयोगियों, संबंधियों, श्रद्धालुओं, शिष्यों, संबंधित संस्थाओं के पदाधिकारियों से निवेदन है कि उनसे संबंधित संस्मरण, चित्र, आदि या किसी पुस्तक, स्मारिका आदि में उनका उल्लेख यदि आपके पास उपलब्ध है तो कृपया डाक या ईमेल से भिजवाने की कृपा करें। अन्यथा हमें सूचित करने का कष्ट करें। हम स्वयं आकर उन्हें स्केन/फोटोप्रति के रूप में प्राप्त करेंगे। शांतिधर्मी में प्रकाशित और अभी प्राप्त हो रहे संस्मरणों का भी उक्त ग्रंथ में सादर उपयोग किया जाएगा।

सम्पादक शांतिधर्मी,
756/3, आदर्श नगर, सुभाष चौक, जींद-१२६१०२
EMail- shantidharmijind@gmail.com
दूरभाष : 094165 45538, 094162 53826, 098964 12152
निवेदक : रमेशचन्द्र आर्य, सहदेव शास्त्री, रवीन्द्र कुमार आर्य (पुत्र)

उन्होंने हमें संस्कारों की सम्पत्ति दी

20 दिसंबर को आभास हुआ कि जैसे पिताजी आँगन में चहलकदमी कर रहे हैं और पौधों को पानी दे रहे हैं। मैं बहुत खुश हुई। मैंने फोन से पूछा- पिताजी, आप ठीक हो गए। उन्होंने कहा- हाँ, मैं बिल्कुल ठीक हूँ। अगले दिन सुबह फोन किया हाल जानने के लिए। बहुत धीमी आवाज में बोल रहे थे। मैंने पूछा- पिताजी अब तबीयत कैसी है? उन्होंने मेरी और बच्चों की कुशलता पूछी और कहा- बेटी, हो सके तो एक बार अवश्य मिल जाना, स्वास्थ्य खराब है। उस दिन खराब मौसम के चलते मैं नहीं आ सकी। 23 की रात्रि को वे चले ही गए। मन में बहुत अफसोस हुआ कि आखिरी समय में मैं पिताजी से नहीं मिल सकी।

मैं पाँच बहन-भाईयों में सबसे छोटी हूँ। इसलिए माता पिता और बड़े बहन भाइयों का स्नेह मुझे ही मिला। पिताजी ने हम पांचों बहनों भाइयों के साथ कभी भी भेदभाव नहीं किया। मुझे याद है एक बार कक्षा 4-5 में मेरा स्कूल बैग खो गया तो मेरे भाई को डाँट सुननी पड़ी थी। यह मेरे पूर्व जन्मों का सौभाग्य था कि मेरा ऐसे परिवार में जन्म हुआ जहां होश संभालते ही परिवार में पवित्र वातावरण पाया। जहाँ सुबह शाम यज्ञ व सन्ध्या होती हो। हमारे घर का वातावरण एकदम सात्त्विक बिल्कुल गुरुकुलों जैसा था। रहना और खाना सादा था। पिताजी हमें पास बैठाकर ऐतिहासिक कहानियाँ सुनाया करते थे। हमारी माताजी हम बच्चों को लेकर आर्यसमाज के सत्संग में जाती। हमारे घर में एक गाय हमेशा रहती थी। माताजी गृहकार्य निपटाकर गाय को चारा वगैरह खिलाकर भी समाज के आयोजन में लेकर जाती। एक तो हमारे परिवार का ऐसा वातावरण और दूसरे पैतृक वैदिक सिद्धान्तों ने हमारे जीवन में ऐसे संस्कार भरे कि हम अधंविश्वासों और व्यसनों से कोसों दूर हैं।

जब हमें अक्षर ज्ञान हुआ तो घर में वैदिक साहित्य का अथाह खजाना था, स्कूल का कार्य निबटा कर हम अपने लघु पुस्तकालय में चले जाते और प्रेरणादायक और ऐतिहासिक पुस्तकों का अध्ययन करते। उन्हीं पुस्तकों के अध्ययन के कारण मैं अपने बच्चों को ऐतिहासिक महापुरुषों और वीर सेनानियों के बारे में बताती रहती हूं। पिताजी की प्रेरणादायक बातों व भारतीय इतिहास की बातों से मेरे बच्चों को उनके स्कूल में पहचान मिली है। मैं अपने आप को सौभाग्यशाली समझती हूँ कि उस महान व्यक्ति के नाम से मैं भी पहचानी जाती हूँ। प्रभु से विनती है कि हमें इतना सामर्थ्य दे कि हम आजीवन उनके बताए रास्ते पर चलते रहें।

श्रीमती उषा सोनी, बिठमड़ा (सुपुत्री)

तपोनिष्ठ भजनोपदेशक, लेखक व साहित्यकार वैदिक धर्म के समर्पित प्रचारक, शांतिधर्मी के संस्थापक, संचालक व सम्पादक श्री पं० चन्द्रभानु आर्य जी के देहान्त पर देश के कोने-कोने से श्रद्धांजली संदेश/संस्मरण प्राप्त हो रहे हैं, जिन्हें हम लगातार प्रकाशित कर रहे हैं। -सम्पादक

एक चरित्रवान विद्वान् आर्य भजनोपदेशक

श्री स्वामी भीष्म जी महाराज ने अपने जीवन में लगभग १२५ भजनोपदेशक शिष्य तैयार किए। अनेक सफल व प्रभावशाली क्रान्तिकारी भजनोपदेशक स्वामी भीष्म जी की शिष्य परंपरा में हुए हैं। स्वामी जी के शिष्यों की एक प्रमुख विशेषता रही है कि सब बलिष्ठ, चरित्रवान और वैदिक सिद्धांत के प्रबल पोषक रहे। पण्डित चन्द्रभान जी की स्वामी भीष्म जी के विद्वान भजनोपदेशक शिष्य के रूप में अपनी एक ख्याति रही है। पण्डित जी ने गुरुकुल घरौंडा में स्वामी भीष्म जी के शिष्य स्वामी रामेश्वरानन्द जी के सानिध्य में रह कर वेद व दर्शनों का अध्ययन किया। यही अध्ययन उनकी कविताओं में साफ-२ प्रदर्शित होता है। पं० जी के भजनों में वैदिक सिद्धांतों के विरुद्ध एक शब्द भी देखने को नहीं मिलेगा।

मुझे याद आ रहा है एक बार पण्डित चन्द्रभानु जी घरौंडा आए, आस पड़ोस के सभी लोग स्वामी भीष्म जी से कहने लगे- स्वामी जी, आज तो आपका बेटा आया है। (बेटा इसलिए कि पण्डित जी का शरीर बड़ा गठा हुआ सुडौल था) आज इसका प्रचार करवादो। स्वामी जी ने कहा ठीक है। मैं स्वयं उस प्रचार में बैठा था। पण्डित जी ने स्वामी भीष्म जी का लिखा वीरांगना लीलावती का भजन इतिहास सुनाया। पण्डित जी के जोशीले व्याख्यान ने जन समूह को मन्त्र मुग्ध कर दिया। अगले दिन बाल्मीकि बस्ती में पण्डितजी ने स्वामीजी का ही लिखा मृगनयनी का इतिहास सुनाया। घरौंडा के लोगों ने स्वामी जी के पास आकर पण्डित जी के प्रचार की बड़ी प्रशंसा की। स्वामी भीष्म जी ने पण्डित जी की पीठ थपथपा कर शाबाशी दी और कहा कि जब तक प्रचार करो वीरता से करना, खुशामद या दबाव में नहीं, और यह बात पण्डित जी ने सारी उम्र निभाई। उन्होंने कभी डर या दबाव में प्रचार नहीं किया। अपनी बात को बड़े विश्वास और साहस के साथ जनता के बीच में रखा। वीरता पण्डित जी के स्वभाव में थी।

मेरे पूज्य पिता श्री देवदत्त और पण्डित चन्द्रभानु जी मित्र थे। पिता जी बताया करते थे कि एक बार हम स्वामी भीष्म जी के साथ १०-१५ शिष्य देहली सूबे के एक समयपुर बादली गांव में प्रचार के लिए पैदल ही चले जा रहे थे। आगे-२ स्वामी भीष्म जी अपनी पहलवानी मस्त चाल में उनके पीछे-२ महाशय हरीदत्त जी, चन्द्रभान जी, मैं खुद (मेरे पिता श्री देवदत्त) महाशय लखपत आदि चले जा रहे थे। सब हट्टे कट्टे! कुछ लोगों ने चन्द्रभान जी से पूछा- कोई कुश्ती का दंगल है क्या किसी गांव में? पण्डित जी बोले- अगले गांव में आर्यसमाज का प्रचार है। आगे हमारे गुरु स्वामी भीष्म जी हैं। उसी रात को गांव में प्रचार हुआ। आसपास के अनेकों गांवों की जनता यह देखने उमड़ पड़ी कि आज पहलवानों की एक मण्डली आर्य समाज का प्रचार करेगी।

जिन दिनों पण्डित चन्द्रभानु जी घरौंडा स्वामी भीष्म जी के पास रहते थे, घटना उन दिनों की है। गांव के कुछ शरारती लड़के पड़ौस में आती जाती लडकियों को परेशान करते थे। पण्डित जी ने यह बात स्वामी जी को बताई और कहा कि आप कहो तो उन्हें सुधार दूँ। स्वामी जी ने कहा- हाँ सुधार तो देना, पर गहरी चोट मत देना। पण्डित जी ने एक दो को पीटा। उसके बाद किसी की हिम्मत नहीं हुई कोई शरारत करने की। स्वामी जी अपने शिष्यों के स्वास्थ्य और चरित्र का विशेष ध्यान रखते थे। स्वामी जी कहा करते थे कि मुझे चन्द्रभानु की विद्वता और चरित्र पर पूरा भरोसा और गर्व है।

पण्डित जी ने पूरे भारत वर्ष में घूम-२ कर आर्य समाज का प्रचार किया। उनके प्रचार में सामाजिक व धार्मिक बुराईयों का खण्डन और वीर रस के साथ-२ चरित्र निर्माण, ब्रह्मचर्य की बात हमेशा होती थी। वे स्वामी जी के एक भजन की एक लाईन प्राय: बोला करते थे कि वेद का प्रचार करना वीरता का काम है। पण्डित चन्द्रभानु जी ने आजीवन वैदिक धर्म का प्रचार समर्पित भाव से किया। आज जैसे मनुष्य के लिए धन ही मुख्य हो गया है। कमाल थे पण्डित जी जैसे आर्यसमाज के भजनोपदेशक! ढोलक बाजा सिर पर उठा कर गाँवों में बिन बुलाए ही जाकर प्रचार करते थे। किसी ने कुछ दे दिया तो ठीक, ना दिया तो ठीक। यहाँ तक कि कई बार तो भोजन और ठहरने की भी कोई व्यवस्था नहीं होती। चने खाए, पानी पिया और अगले गांव में प्रचार

करने चल पड़े। पण्डित चन्द्रभानु जी ऋषि दयानन्द के वैदिक संदेश को जन जन तक पहुँचाने के लिए इतने तत्पर रहते थे कि महीनों अपने परिवार की सुध लेने का मौका उन्हें नहीं मिलता था। वे गृहस्थी थे, किन्तु स्वभाव से, आचार विचार से वे धुन के धनी एक साधु थे। पैसे, परिवार के प्रति उनका कोई मोह नहीं था। आर्यसमाज के प्रचार के सामने उन्हें सब गैर जरूरी लगता था। दयानन्द के ऐसे समर्पित सैनिक थे पण्डित चन्द्रभानु जी। वास्तव में पण्डित चन्द्रभानु जी जैसे निर्भीक, समर्पित और वैदिक सिद्धांतों के कट्टर समर्थक, जिनका उज्ज्वल चरित्र आम जनता के बीच में एक मिसाल होता था, ऐसे भजनोपदेशकों के कारण ही आर्यसमाज का मजबूत दुर्ग तैयार हुआ है। आदरणीय पण्डित चन्द्रभानु जी का शरीरान्त होना हम सब परिवार वालों के लिए तो एक दु:खद घटना है ही, साथ ही देश पण्डित चन्द्रभानु जी के रूप में एक निडर, विद्वान और चरित्रवान उपदेशक खो चुका है। आर्यसमाज के प्रचार प्रसार में आर्य भजनोपदेशकों का मुख्य और बहुत बड़ा योगदान रहा है। भजनोपदेशक ही वास्तव में आर्यसमाज की रीढ़ की हड्डी हैं।

आर्यसमाज के नेता यदि वास्तव में आर्यसमाज का प्रचार प्रसार चाहते हैं तो उन्हे भजनोपदेशकों का सम्मान करना होगा। उनके महत्त्व, उनकी जरूरतों को समझना होगा। उनके परिवारों को सभी सुविधाओं के साथ पूरा संरक्षण देना होगा, योग्यतानुसार खुले दिल से उनकी आर्थिक जरूरतों को पूरा करने के लिए तैयार रहना होगा, तभी अच्छे भजनोपदेशक आने वाले समय में मिल सकेंगे। शान्तिधर्मी पण्डित चन्द्रभानु जी का लगाया हुआ एक पौधा है, जिसे सभी सदस्य बड़े अच्छे से पोषित कर रहे हैं। मेरी शान्तिधर्मी परिवार को बहुत-२ शुभकामनाएं हैं। ईश कृपा से पण्डित चन्द्रभानु जी के लगाए इस पौधे की प्रशंसा रूपी सुगंध पूरे विश्व में फैले, यही मेरी प्रभु से कामना है।

शिव कुमार आर्य (०९७२९०७२६९६)
स्वामी भीष्म मार्ग, भीष्म भवन, घरौंडा, जि० करनाल

दयानन्द के सच्चे सिपाही थे चन्द्रभानु आर्य

आर्य जगत् के प्रसिद्ध भजनोपदेशक, वैदिक विद्वान परम पूज्य श्री चन्द्रभान जी आर्य के निधन से आर्य जगत् को बड़ी ठेस पहुँची हैं। वे सच्चे ऋषि भक्त, स्वामी दयानन्द के सच्चे सिपाही, आर्य समाज के दीवाने थे। जब भी उनका स्मरण आता है 40-45 वर्ष पुरानी यादें आ जाती हैं। आप हमारी आर्यसमाज बीकानेर में भजन मण्डली समेत प्रचार के लिये आते थे। शाम को रुखा-सूखा भोजन खाकर ही नजदीक के गांवों में प्रचार के लिये चले जाते थे। आपके साथ गुरुवर महाशय हीरालाल जी, महाशय हट्टी सिंह जी, मा. सत्यवीर जी, वैद्य शिवनारायण जी प्रचार के लिये जाते थे। रात को प्रचार(भजनोपदेश)समाप्त करके वापिस पैदल आकर आर्यसमाज बीकानेर में ही सोते थे। वैद्य शिवनारायण जी ने मुझे बताया कि उन्होंने भी 2 वर्ष तक उनके साथ मण्डली में जालन्धर में प्रचार कार्य किया। आप जीवन भर सादगी में रहते हुये भजनों द्वारा, इतिहास द्वारा व अपनी लेखनी द्वारा आर्य समाज का प्रचार प्रसार करते रहे।

सन् 2007 में आपके चरण-कमलों ने हमारे घर को भी सुशोभित किया। आपने मुझे कहा कि अपने पिता श्री अमीचन्द की भांति निस्वार्थ भावना से समाज सेवा का कार्य करते रहो। मेरे आग्रह पर प्रथम स्वतन्त्रता संग्राम की 150वीं वर्षगाँठ पर 23 सितज़्बर 2007 को वीरवर राव तुलाराम व महर्षि स्वामी दयानन्द का रेवाड़ी आगमन भजन इतिहास में प्रकाशित करवाया।

आपने 'शान्तिधर्मी' पत्रिका का कुशल व सफल सज़्पादन किया। महत्ती भूमिका रही। शान्ति-प्रवाह में आपके ओजस्वी व समाज को एक अच्छी दिशा देने के अनमोल विचार मिलते रहे। श्री सहदेव समर्पित जी ने संयुक्त सज़्पादक के रुप में कड़ी मेहनत, सच्ची लगन, सत्यनिष्ठा व बड़े ही सेवा भाव से इसके प्रकाशन में अपनी भूमिका निभाई हैं। उनको भी कोटि-2 नमन।

मैं उस महान आत्मा को श्रद्धा-सुमन अर्पित करता हूँ। श्री चन्द्रभान जी के लिये सच्ची श्रद्धांजलि यही होगी कि हम उनके आदर्श जीवन के रास्ते पर चलें।

दयाराम आर्य , (राज्य शिक्षक पुरस्कार से सज़्मानित)
जिला प्रभारी, पंतजलि योग समिति रेवाड़ी (हरियाणा)
गंगायचा अहीर बीकानेर, जिला रेवाड़ी।

सदैव याद किए जाते रहेंगे

आदरणीय पं. चन्द्रभानु आर्य जी के निधन का वृतान्त सुनकर ऐसा शोक लगा जैसे किसी पारिवारिक सदस्य के चले जाने पर होता है। अपने युवाकाल के प्रारंभ में जब हमने कुछ साथियों को लेकर इस क्षेत्र में आर्यसमाज की कार्यकारिणी गठित की थी तो कई बार पूज्य पंडित चन्द्रभानु जी के भजनोपदेश के कार्यक्रम रखे गए। उनकी वाणी से आर्य समाज, महर्षि दयानन्द और वैदिक सिद्धान्तों की ऐसी स्वर लहरी निकलती थी जो श्रोताओं के अन्त:करण को

स्पर्श करती थी। स्वामी भीष्म जी के बनाये हुए भजनों को तो वे अत्यंत मंत्रमुग्ध होकर गाया करते थे।

आयु बढ़ने पर प्रचारार्थ बाहर आना जाना कम हो जाने पर भी 'शांतिधर्मी' पत्रिका के माध्यम से निरन्तर उनका आशीर्वाद 'शान्ति प्रवाह' के रुप में प्राप्त होता था। पूज्य पंडित जी का जीवन घर में रहते हुए भी किसी साधु संन्यासी जैसा था। एक और विशेषता यह रही कि उन्होंने आर्यसमाज के सिद्धांतों की समृद्ध विरासत अपने परिवार को भी दी जो कि प्राय: विद्वानों और उपदेशकों के जीवन में नहीं मिलती। वह अपने दृढ़ आर्यत्व की अमिट छाप घर-परिवार और बाहर के परिचित जनों पर छोड़कर गए हैं। वस्तुत: स्वर्गीय पं. चन्द्रभान जी आर्य भजनोपदेशक उनके द्वारा किए गए कार्यों के रुप में सदैव याद किए जाते रहेंगे।

परमपिता परमात्मा से प्रार्थना कि वह आप सब परिवार जनों को उनके वियोग से हुये दु:ख को सहन करने तथा उनके द्वारा दिखाए गए मार्ग पर दृढ़तापूर्वक आगे बढ़ते रहने की शक्ति प्रदान करें। इस आर्यसमाज के सभी सदस्य एवं इससे जुड़े हुए आर्य जन पूज्य पिताजी के प्रति हार्दिक श्रद्धांजलि अर्पित करते हुए परिवार के प्रति अपनी गहन संवेदना प्रेषित करते हैं।

ओम प्रकाश आर्य, (9466749992)
आर्यसमाज, गोकरण मार्ग, रोहतक

वैचारिक क्रान्ति का नाम था- पं० चन्द्रभानु

वैदिक धर्म का जडों को अपने खून से सिंचित करने वाले श्रद्धेय धर्मवीर पं० लेखराम आर्य मुसाफिर की अन्तिम इच्छा को साधन सम्पन्न विभूतियों ने पूरा किया तो आश्चर्य नही-- परन्तु संसाधनों की चिन्ता न करके व्यक्ति तहरीर (शांतिधर्मी) तथा तकरीर (भजनोपदेश) का काम अन्तिम सांस तक पूरे दम खम के साथ करे, यह आश्चर्य ही है। श्रद्धेय पं० चन्द्रभानु आर्योपदेशक ने वेदों के मार्मिक तत्वों को अपनी भजनशैली से जन-साधारण के हृदय पटल पर अंकित कर यश कमाया। पंडितजी के उपदेशों में पाण्डित्य की भीनी-२ सुगन्ध श्रोताओं को मंत्र मुग्ध करती थी। अथर्ववेद की सूक्ति है- सिहाः इव नानदति प्रचेतसः।। ज्ञानी पुरुष ही सिंह की भांति गरजते हैं। उन्होंने चारित्रिक आत्मविश्वास, लग्न, कर्मठता, कर्तव्यनिष्ठ साहस, निर्भीकता मिलनसारिता, व्यवहार-कुशलता तथा आस्तिकता के बल पर जीवन की ऊँचाईयों को प्राप्त किया। उनकी जीवन शैली ने नवचेतना का संचार कर सभी आर्यों के नाम सिंह-गर्जन करने की प्रेरणा जगाई। निराशा पर आशा की विजय लिए श्रद्धेय पं० जी के गुणों में से एक-२ को अपने आचरण में उतार कर इस अपूरणीय क्षति की पूर्ति कर सकेंगे। पं० जी ने अनेक दयानन्द के सजग प्रहरी तैयार किये, यदि आज हम सब मिलकर परिस्थितियों से जूझकर वैदिक धर्म की दुनदुभि बजाने वाला एक पं० चन्द्रभानु आर्य तैयार कर समाज को दे सकें तो उनको यह सच्ची श्रद्धांजलि होगी।

ईश्वर की शाश्वत व्यवस्था में आर्य समाज के लिए अपने घर गृहस्थ की व्यवस्थाओं से बेपरवाह कितने उपदेशक रत्न हमारे बीच से चले गये पर हमने उनके संकल्पों की उपेक्षा की। शोक संवेदना के बाद उनकी और उनके कार्यों की इतिश्री हो गयी। यदि घड़ियाली आँसुओं की जगह लग्न, कर्मठता और कर्तव्यनिष्ठा के मोती निकालकर धर्म रक्षा का शंखनाद संस्थाओं से होता तो आर्य समाज संस्था विश्व की शिरोमणि संस्था होती। पचास वर्ष पूर्व जिन उपदेशकों, भजनोपदेशकों की सिंह गर्जना के आगे विधर्मी गीदड़ भूमिगत हो जाते थे, आज वे छाती निकालकर हमारे सामने न अड़ते।

पंडित जी ईंट, पत्थर, सीमेंट और लोहे से बने भवनों को संस्था नहीं मानते थे। वैचारिक क्रान्ति ही उनकी महत्वपूर्ण संस्था थी। लगभग १५ वर्षों से बड़ौत में राष्ट्रीय वाचस्पति परोपकारिणी परिषद् के माध्यम से तर्कमार्तण्ड पं० रामचन्द्र देहलवी जी की पुण्य तिथि मनाई जाती है। २००८ फरवरी में निर्माणाधीन पं० रामचन्द्र देहलवी उपदेशक विद्यालय बड़ौत में पं० चन्द्रभानु जी आर्य का उद्बोधन हुआ। पंडितजी ने कहा-'भवन निर्माण गौण तथा जुझारू उपदेशक, पुरोहित तथा भजनोपदेशक तैयार करने की प्राथमिकता आधुनिक समाज की माँग है।' श्रद्धेय पंडित जी ने आत्मिक बल देते हुए उत्साहित किया- 'हजारों सुयोग्य सैद्धान्तिक ज्ञान के भण्डार पुरोहित, जुझारू उपदेशक तथा भजनोदेशकों की स्वर लहरी कृण्वन्तो विश्वमार्यम् के स्वप्न को साकार कर सकेगी। यह आशा मुझे तुमसे (आचार्य धनकुमार शास्त्री) पूर्ण होती दिखाई दे रही है।'

श्रद्धेय पं० श्री चन्द्रभानु जी आर्योपदेशक द्वारा तैयार हजारों दयानन्द के जागरूक प्रहरियो! दिवंगत आत्मा की सद्गति तथा उनके द्वारा प्रेरित सामाजिक कार्यों को चिर स्थायित्त्व प्रदान करने के लिए प्राणपण से वैदिक धर्म की दुन्दुभि बजाने का संकल्प लो। ये श्रद्धा सुमन श्रद्धेय पं० चन्द्रभानु आर्योपदेशक को चाहिएँ।

आचार्य धनकुमार शास्त्री, अधिष्ठाता,
तर्कमार्तण्ड पं० रामचन्द्र देहलवी उपदेशक विद्यालय,
बड़ौत, बागपत, (उ० प्र०)

बैलगाड़ी की यात्रा का संस्मरण

पं० चन्द्रभानु जी आर्य के देहान्त का समाचार पढ़कर एकदम असहजता की स्थिति में पं० जी का प्रेरणादायी व्यक्तित्त्व मेरे मानस पटल पर प्रवाहित होने लगा। अभी उनकी आयु ८५ वर्ष ही थी। स्वास्थ्य भी अच्छा था। मानसिक एवं शारीरिक रूप से स्वस्थ थे। इतना शीघ्र चले जाएँगे, सोच भी नहीं सकते थे। किन्तु आना जाना सब उस निराकार प्रभु की कृपा है। उसकी व्यवस्था एवं नियती को स्वीकार करना ही पड़ता है। लगभग २ मास पूर्व मैंने पण्डित जी से दूरभाष पर बात की थी। उनको अपना परिचय दिया कि मैं आर्यसमाज रेवाड़ी का मंत्री बोल रहा हूँ। साथ ही पहचान हेतु ३७ वर्ष पुरानी बात बताई कि १९७७ में जटियाना में महाशय मौजीराम के साथ बैलगाड़ी में बैठकर आए थे, तो पण्डित जी को सब बातें तुरन्त याद आ गई तथा पहचान गए। कुशल क्षेम पूछा तथा कभी जींद आकर मिलने को भी कहा। मैं चाहता था कि कभी किसी कार्यवश जींद जाकर पण्डित जी से आशीर्वाद प्राप्त कर सकूँ। परन्तु समय किसी का इन्तजार नहीं करता। भेंट करने की इच्छा मन में ही रह गई। शांतिधर्मी के साथ ही पण्डित जी की नवीन कृति 'भजन-भास्कर' जो उन्होंने अपने गुरुवर स्वामी भीष्म जी को समर्पित की है तथा हरियाणा साहित्य अकादमी के सौजन्य से प्रकाशित है, मेरी स्वाध्याय की मेज पर रखी है। मैं उनकी रचनाओं को जब-तब पढ़ता रहता हूँ। पं० जी आशु कवि थे। वे शब्द रचना और छंद बनाने में स्वामी भीष्मजी की तरह कुशल थे।

जैसा कि मैंने ३७ वर्ष पुरानी बात का संकेत किया- १९७७ में अलवर जिले के गाँव जटियाना में मैं प्राध्यापक था, जो कि हरसौली रेलवे स्टेशन के पूर्व में ५ किलोमीटर की दूरी पर स्थित है। गाँव में गुर्जर जाति के लोग हैं। कुछ सज्जन आर्यसमाज की विचारधारा के भी थे। उनमें म० राम प्रसाद, हेतराम, प्रभातीलाल भजन भी गा लेते थे और हारमोनियम भी बजा लेते थे। कुम्हारों के परिवार में लड़के की शादी थी। उन्होंने मुझे एक अच्छा सा भजनी लाने को कहा। उन दिनों शादी विवाह में भजनपार्टी बुलाने का रिवाज था। टेलीफोन सुविधा तब मात्र शहरों तक ही थी। पत्र द्वारा ही समाचार आदान प्रदान होते थे। महाशय बुद्धराम कन्हौरी तथा महाशय मौजीराम रोहतक से मेरे पारिवारिक संबंध थे। मैंने महाशय मौजीराम जी को पत्र लिखा, जिसमें विवाह की तिथि तथा रेवाड़ी से आने के लिए रेलगाड़ी का नाम, समय, प्लेटफार्म तथा ४० किलोमीटर दूर हरसौली रेलवे स्टेशन पर उतरकर स्टेशन से बाहर बैलगाड़ी तैयार मिलने की सब बातें लिख दीं। महाशय मौजीराम जी पंडित चन्द्रभानु जी को लेकर बिना किसी परेशानी के बैलगाड़ी द्वारा जटियाना पहुंच गए। सायं के समय गाँव के बीच में मन्दिर के थड़े पर पण्डित जी का भजनोपदेश हुआ। उन दिनों माइक की व्यवस्था नहीं हो पाती थी। रात्रि के शांत वातावरण में पण्डित जी ने बुलन्द आवाज में रोचक व मनोहारी भजनोपदेश किया। गाँव वालों ने प्रशंसा की। दूसरे दिन बारात गई तो वहाँ भी रोचक कार्यक्रम हुआ। दूसरे दिन बारात लौटी तो फिर जटियाना में भजनोपदेश हुआ। पण्डित जी को उन्होंने बिना मांगे ५०० रुपये दिये तथा आने जाने का किराया भी दिया। इसके बाद पण्डित जी के दर्शन आर्यसमाज के उत्सवों में जब तब हो जाया करते थे।

पण्डित जी के चले जाने से आयर्ससमाज को बहुत बड़ी क्षति हुई है। आर्यसमाज के पुराने छायादार वटवृक्ष अब गिरते जा रहे हैं। उन जैसे महामानवों का रिक्त स्थान शायद ही कोई भर सके। नए वृक्ष उन जैसी छांव संभवतः प्रदान नहीं कर सकेंगें। वे दिव्य, निस्वार्थ, निर्लेप और परोपकारी जीव थे। महर्षि दयानन्द के सच्चे योद्धा थे। उनकी कथनी और करनी में कोई अन्तर नहीं था। ऐसी हस्तियाँ आर्यसमाज में सदैव नई पीढ़ी को प्रेरणा देती रहेंगी। उन्हें मेरी भावभीनी श्रद्धाञ्जली।

देशराज आर्य सेवानिवृत्त प्रधानाचार्य
मंत्री आर्यसमाज, रेवाड़ी चलभाष (०९४१६३३७६०९)

सादा जीवन उच्च विचार के धनी

पं० चन्द्रभान आर्य बहुत ही सरल स्वभाव, धार्मिक एवं परोपकारी समाज सेवी के रूप में जाने जाते थे। आपकी धीर-गंभीर वाणी बहुत मधुर और प्रभावशाली थी। पं० जी की उपदेश की शैली कमाल की थी। भाषा भी सरल और सबको समझ में आने वाली थी। आप एक उच्च कोटि के कवि और विद्वान् महापुरुष थे। आपने अपने जीवन को संसार के उपकार के लिए भेंट कर दिया। उनमें शिक्षा, दान, परोपकार, गोसेवा के विशेष गुण थे, ये गुण आप अपने परिवार को भी देकर गए। समाज के लिए आप जेलों में भी गए। आप सादा जीवन उच्च विचार की प्रतिमूर्त्ति थे। बहुत संस्थाओं ने आपको सम्मानित किया। लेकिन वे इतने विशाल व्यक्तित्त्व के धनी थे कि संस्थाएँ ही उनको सम्मानित करके सम्मानित होती थीं। मुझे भी कई बार उनके साथ गांवों में प्रचार में रहने का अवसर मिला। उनका प्रचार लोगों पर जादू सा कर देता था। वे अपनी दक्षिणा से पुस्तकें छपवाकर निःशुल्क बांट देते थे।

सुलतान आर्य, रोहतक रोड जींद (९४१६७ १७९३८)

गुरुजनों का पुण्य स्मरण

❐स्व० श्री चन्द्रभानु आर्योपदेशक

संस्मरण का संग्रहण एक चुनौतीपूर्ण कार्य है। खास बात इसमें ईमानदारी की है। जीवन में अच्छे और बुरे दोनों प्रकार के अनुभव सभी को होते हैं। अभी आर्य स्वर्णकार मासिक के एक अंक में एक प्रसंग छपा था, जिसका भाव था कि बुरे संस्मरणों को रेत पर लिखो और अच्छे अनुभवों को पत्थर पर लिखो। रेत पर भी लिखने की क्या आवश्यकता है? यह एक प्रश्न हो सकता है। बुरे अनुभव भी कुछ न कुछ प्रेरणा तो अवश्य देते ही हैं। मेरा कोई विचार इन अनुभवों को लिखने का नहीं था। लेकिन जब कभी प्रसंगवश प्रिय सहदेव व विवेक को कुछ घटनाएँ सुनाता था तो इनका आग्रह रहता था कि इनको लेखनीबद्ध किया जाए। अब तो ईश्वरीय प्रेरणा भी हुई कि मैं इस आग्रह को स्वीकार कर बैठा। अब इसमें क्या ग्राह्य है क्या नहीं, इसका निर्णय तो सुहृदों को करना है।

बचपन में

मेरा जन्म आसौज शुक्ला दौज को ग्राम लोहारी जिला करनाल (वर्त्तमान जिला पानीपत) में पिता श्री हरज्ञान सिंह व माता श्रीमती मानकौर के घर हुआ था। मैं अपने दस भाई-बहनों में सबसे छोटा था और माता-पिता का लाड़ला था। मेरे माता पिता प्रत्यक्ष रूप से तो आर्यसमाज से नहीं जुड़े थे, लेकिन वे अत्यंत धार्मिक और सात्त्विक थे। मेरे बड़े भ्राता श्री सुखलाल आर्य प्रत्यक्ष रूप से आर्यसमाज से जुड़े थे और उनके द्वारा विभिन्न अवसरों पर घर में आर्य वातावरण बना रहता था। वे इलाके के एक प्रसिद्ध पहलवान थे। हमारे पिता उनसे सत्यार्थप्रकाश सुना करते थे। मेरे पिता दुकान करते थे। (स्वर्णकार) कुछ कृषि भी होती थी। सबसे बड़े भ्राता चन्दगीराम नेत्रहीन थे। सुखलाल युवक हुए तो वे पिता जी की मदद करने लगे। घर की आर्थिक स्थिति ठीक थी। पर कमाऊ पुत्र सुखलाल का लगभग २२-२३ वर्ष की अवस्था में ही निधन हो गया। मैं और मेरे बड़े भाई किशनचन्द छोटे थे। स्थिति खराब हो गई। मेरी माता की पहले से ही मुझे आर्यसमाज को अर्पित करने की भावना थी। चार जमात उर्दू की पढ़कर, और कालखा ग्राम में आर्य पाठशाला से कुछ संस्कृत का अध्ययन कर जब मैं तरुणावस्था में आया तो मैंने भी अपना दिशा निर्धारण कर लिया था। मुझे गाने का शौक था और उन दिनों हमारे इलाके में स्वामी भीष्म जी का बड़ा प्रभाव था। पहले हमारा परिवार सुताना में रहता था और वहाँ स्वामी भीष्म जी अकसर आते रहते थे। मैं स्वामी भीष्म जी के भजन और व्याख्यान सुनकर उन जैसा बनने की सोचता था।

जब भजनोपदेशक बनने के लिए लगभग १८ वर्ष की अवस्था में उनके पास गया तो उन्होंने संभवतः जमानत के लिए या कोई परिचय न होने के कारण मुझे १०१/- और पगड़ी देने को कहा। मेरे पास पैसे नहीं थे। मैं निराश होकर लौट आया। उस समय मेरे सहपाठी श्री हरिवंश (हरिवंश वानप्रस्थी) भी मेरे साथ थे। उन्होंने साहस दिया और निराश न होकर समय का इन्तजार करने को कहा।

गुरु चरणों में

कुछ दिनों के पश्चात् हमारे गांव में स्वामी भीष्म जी और स्वामी रामेश्वरानन्द जी का आगमन हुआ। प्रचार के दौरान गांव के मौजिज लोगों ने स्वामी जी से कहा कि हमारा लड़का चन्द्रभान बहुत अच्छा गाता है। इसके भी दो भजन करवा दो। स्वामी जी की स्वीकृति के बाद मैंने भजन गाए। मेरे भजन बहुत अच्छे रहे। स्वामीजी ने गांव के लोगों से मेरे चालचलन के बारे में पूछा। गांव के बुजुर्गों ने कहा कि बहुत ईमानदार और चरित्रवान लड़का है। स्वामीजी ने मुझे घरौंडा बुला लिया और मैं खाने के बरतन और बिस्तरा लेकर घरौंडा पहुंच गया।

स्वामीजी के पास जाने के बाद मैंने अनुभव किया कि स्वामीजी बाहर से दिखने में जितने कठोर हैं अन्दर से उतने ही कोमल हैं। संस्कृत के कवि ने कहा है।

वज्रादपि कठोराणि मृदूनि कुसुमादपि।
लोकोत्तराणां चेतांसि को हि विज्ञातुमर्हति।।

स्वामी जी का व्यक्तित्त्व कुछ ऐसा ही था। उनका अपने शिष्यों के प्रति स्नेह देखते ही बनता था। स्वामी जी की पहली शिक्षा थी कि ऊपर से ठोको, नीचे से रोको। ब्रह्मचर्य और आचरण के मामले में वे कोई ढ़िलाई सहन नहीं करते थे। प्रचार के लिए जाते, कुछ शिष्यों को साथ ले जाते कुछ को छोड़ जाते। खाने की जो विशेष सामग्री रहती, यदि आने के बाद बची रहती तो डांटते कि तुम इसे भी नहीं खा सके। भजन गायन के साथ साथ सिद्धान्त का ज्ञान भी उपदेशकों के लिए आवश्यक समझते थे। पूज्य

स्वामी रामेश्वरानन्द जी महाराज का मेरे प्रति विशेष स्नेह था। उनके आदेशानुसार मैं दो घंटे के लिए गुरुकुल में जाया करता था। वे मुझे विशेष रूचि लेकर न्याय, वेदान्त आदि दर्शन और उपनिषद् पढ़ाया करते थे। इस प्रकार इन दोनों गुरुजनों ने मुझपर विशेष कृपा की, जिस कारण मैं किसी योग्य बन सका।

स्वामी भीष्म जी माता पिता के समान अपने शिष्यों का ध्यान रखते थे। स्वामी जी के साथ दिल्ली जाना होता था तो कई बार कई कई दिनों तक आर्यसमाज बाजार सीताराम में ठहरना होता था। एक बार स्वामी जी अपने ढोलक वादक के साथ मुझे एक धर्मशाला में छोड़कर स्वयं किसी कार्य से चले गए। ढोलक वादक बाजार में चला गया। किसी ने स्वामी जी को बाद में कहा कि आप के चेले तो बाजार में फिरते रहते हैं। स्वामीजी को मेरी चिन्ता हुई। स्वामी जी ने मुझसे पूछा कि रात को कहाँ गए थे, मैंने बता दिया कि मैं तो सो रहा था। मैं समझ नहीं पाया कि बात क्या है। बाद में उन्होंने ढोलकिए से जानकारी ली तो उसने बता दिया कि वह किसी काम से गया था, चन्द्रभानु को इसकी जानकारी नहीं है, वह तो अन्दर सो रहा था। इस पर स्वामी जी शांत हुए। कहने को तो छोटी सी बात है लेकिन इससे स्वामी जी के चरित्र की विशेषता का पता चलता है कि अपने शिष्यों का प्रत्येक अवस्था में ध्यान रखते थे और उनके अनुशासन और चरित्र के मामले में कितने सतर्क थे।

मुझे तो उपदेशक बनना है

दिल्ली में रहते हुए एक घटना हुई। जिसमें मेरे संकल्प बल की भी परीक्षा हुई और वह मेरे जीवन की एक यादगार बन गई। मैं घर कभी कभार ही जाता था। दिल्ली की भोगल बस्ती में रहने वाली एक माता थी। वह मुझे प्रायः स्वामीजी के साथ देखती थी। वह विधवा और निःसन्तान थी। एक दिन वे स्वामी जी के पास आकर बड़ी भूमिका बांधकर बोली कि आपके पास यह चन्द्रभानु ब्रह्मचारी है, जिसका व्यवहार और आचरण बहुत अच्छा है, मैं निस्संतान हूँ। मैं इस ब्रह्मचारी को गोद लेना चाहती हूँ। यदि आप अनुमति दें तो मेरा भी सहारा हो जाएगा। मुझे इस बात का तब पता चला जब माता अंगिरा और स्वामीजी के मध्य इस बात पर बहस हो रही थी। माता अंगिरा देवी, आर्य समाज बाजार सीताराम की महिला कार्यकर्त्री थीं और स्वामी जी की बड़ी श्रद्धालु थी। स्वामी जी मुझे गोद देने से मना कर रहे थे। माता जी कह रही थी कि गोद देने में क्या हर्ज है। गोद देने के बाद भी यह उपदेशक ही रहेगा। स्वामी जी पहले तो मना करते रहे, पर बाद में कह दिया कि चलो चन्द्रभानु से ही पूछ लो। माता अंगिरा ने मुझे बहुत समझाया-मरे, इसके पास १५ लाख की संपत्ति है। मान जा। लेकिन मैं ने साफ इन्कार कर दिया। मुझे तो उपदेशक बनना है। घर पहले ही छूट चुका था। यह लगभग १९५० की घटना है। स्वामी जी का इस घटना से मुझ पर विश्वास और भी बढ़ गया।

स्वामी रामेश्वरानन्द

स्वामी रामेश्वरानन्द जी महाराज के स्नेह का मैंने उल्लेख किया था। स्वामी जी मुझे पढ़ाते तो थे ही, एक बार उन्होंने पूज्य धर्मवीर जी शास्त्री से कहा कि ईमानदार ब्रह्मचारी है, इसको एक एकड़ जमीन दे दो, प्रचार करता रहेगा। हालांकि मेरी भी रूचि नहीं थी पर उनके लड़कों ने यह बात सिरे नहीं चढ़ने दी। स्वामी जी जब तक विराजमान रहे, उत्सवों में बड़े सम्मान के साथ गुरुकुल में बुलाते रहे। उनके स्वर्गवास के पश्चात् न तो उन्होंने मुझे बुलाया और न मैं गया। अब गुरुकुल पता नहीं किस हालत में है।

स्वामी रामेश्वरानन्द जी का आर्यसमाज में बहुत योगदान है, परन्तु उनका चर्चा कम ही होता है। स्वामीजी के त्याग के संबंध में एक घटना मुझे याद आती है। उनके एक भाई एक बार गुरुकुल में आए। उनकी पारिवारिक सम्पत्ति का बंटवारा हुआ था और उनके अनुसार उनको कुछ कम मिला था। वे चाहते थे कि स्वामीजी उनके साथ जाएँ और अपना हिस्सा (स्वामी जी का) उनको दिलवा दें। स्वामी जी ने कह दिया कि मेरा न तो कोई परिवार है और न कोई भाई। हम तो संन्यासी हैं और सारा संसार ही हमारा परिवार है। उसके आग्रह करने पर स्वामी जी ने कहा कि तुम चाहो तो यहाँ रहते रहो। गाय चरा दिया करो, हम तुम्हारा खर्च देते रहेंगे। उन्होंने गुरुकुल में रहना शुरु कर दिया। कुछ दिनों बाद स्वामीजी को पता चला कि वह काम नहीं करते और आराम करते रहते हैं। स्वामी जी ने उनको बुलाकर कहा कि यह गुरुकुल समाज का है, उन्हें वहाँ रहना होगा तो काम करना होगा। अन्ततः उन्होंने अपने भाई को वहाँ से भेज दिया।

मैं कई बार अपने भजनोपदेश में एक चुटकुला सुनाया करता हूँ कि एक स्थान पर एक संन्यासी रो रहे थे। हमने पूछा कि महाराज क्या बात है? उन्होंने कहा कि बच्चे याद आ रहे हैं। पूछा कि कब संन्यास लिया था? उन्होंने कहा कि परसों ही लिया था। मैंने कहा कि क्यों लिया था, उन्होंने कहा कि घरवाली के साथ झगड़ा हो गया था। आज के समाज में इस प्रकार के उदाहरण अनेक मिल जाएंगे कि संन्यासियों को अपने परिवार और भाई भतीजों की चिन्ता खाए जाती है। वे कैसे लोग थे कि उन्हें सारा संसार ही अपना नजर आता था। (क्रमशः)

सामयिक प्रश्न

संस्कृत भाषा पर आक्षेप क्यों?

❐महीपाल आर्य, प्राध्यापक संस्कृत, हसला प्रधान, हिसार (9416177041)

सच यह है कि आज कम्प्यूटर में सर्वाधिक उपयोगी संस्कृत भाषा है। 'संयुक्त राष्ट्र संघ' ने 'वेद' को सृष्टि का ज्ञान स्वीकार कर अपने 'ग्रन्थागार' में ऋग्वेद को सुशोभित किया है। वेदों में विज्ञान बीज रूप में विद्यमान है। उसके सिद्धान्त भौतिक विज्ञान के आधुनिक सिद्धान्तों से साम्य रखते हैं।

पिछले दिनों केन्द्रीय विद्यालयों में तृतीय भाषा के रूप में जर्मनी भाषा के स्थान पर संस्कृत भाषा को तरजीह देने के सरकारी निर्णय पर देश में कोलाहल मच गया। देश की संस्कृति जिस संस्कृत भाषा पर अवलम्बित है, आश्रित है उसी पर आक्षेप क्यों? यह प्रश्न हर उस व्यक्ति को उद्वेलित कर रहा है जो इस देश का शुभचिन्तक है। ये बवेला मचाने वाले, आक्षेप व आपत्ति करने वाले कौन हैं? जनता जनार्दन इन्हें दूरदर्शन पर देख रही है। समाचार-पत्रों के माध्यम से मानसिक कुण्ठा के शिकार इस बिरादरी के लोगों को जाना जा सकता है। इन्हें संस्कृत भाषा पर आपत्ति होने के साथ-साथ केन्द्रीय मानव संसाधन मन्त्री एवं शिक्षा मन्त्री का किसी संस्कृत-भाषी ज्योतिषी से मिलना भी नागवार गुजरा है। यद्यपि मैं किसी राजनैतिक पार्टी का पक्षधर नहीं हूँ लेकिन सच्चाई का पक्षधर अवश्य हूँ। आक्षेपकर्ताओं का तर्क था कि शिक्षा मन्त्री के नाते उन्हें अन्धविश्वास और अवैज्ञानिक मान्यताओं को बढ़ावा नहीं देना चाहिए। ऐसी भाषा को भी बढ़ावा नहीं दिया जाना चाहिए जिससे अवैज्ञानिक मान्यताओं को बल मिलता हो।

संस्कृत भाषा को अवैज्ञानिक बतलाना उनकी बुद्धि का दिवालियापन है। संस्कृत भाषा के समक्ष कोई भाषा वैज्ञानिक धरातल पर ठहर नहीं सकती। रही बात ज्योतिष की, उन्हें हम बताना चाहते हैं कि आकाशगत सूर्यमण्डल से सम्बन्ध रखने वाले नक्षत्र विज्ञान को ज्योतिष (एस्ट्रॉनोमी) कहते हैं जो वेद का छठा अंग माना गया है। इसमें जो गणित ज्योतिष है वह तो सच्चा है और जो फलित ज्योतिष है वह झूठा है तथा अज्ञान का प्रतीक है। लेकिन इसकी आड़ में संस्कृत भाषा पर आपत्ति करना कहाँ तक उचित है? क्या संस्कृत भाषा के पठन-पाठन पर अंकुश लगा दिया जाए? संस्कृत भाषा पर प्रतिबन्ध लगा देने से, उसे सम्मानजनक दर्जा न दिये जाने से क्या इन लोगों के अरमान पूर्ण हो जाएंगे जिन्हें पाश्चात्यों ने अपने मानस में पाला था? नहीं कदापि नहीं।

पाश्चात्य मानसिकता से सराबोर ये लोग सम्भवतः अद्यतन सम्यक्तया नहीं समझ पाये हैं कि जिस संस्कृत भाषा पर आश्रित संस्कृति को नष्ट करने के लिए मैकाले जैसे लोगों ने सांस्कृतिक आक्रमण का पुरजोर अभियान चलाया था, यह सीना ताने आज के सन्दर्भ में भी मूल्यों की संवाहिका बनी अक्षुण्ण खड़ी है। विश्व की नाना संस्कृतियों का इतिहास साक्षी है कि संसार में अनेक संस्कृतियाँ बरसाती पौधों के समान उत्पन्न हुई और सूख गईं। नील नदी की घाटी में गगनचुम्बी पिरामिडों का निर्माण करने वाली तथा अपने पितरों की 'ममी' के रूप में पूजा करने वाली मिश्र की संस्कृति अब कहाँ है? असीरिया और बेबीलोन की संस्कृतियाँ क्या अब भूमि पर हैं? देवी देवताओं और प्राकृतिक शक्तियों को पूजने वाली संस्कृतियाँ क्या वर्तमान रोम के लोगों के लिए कोई महत्त्व रखती हैं? किन्तु भारतीय संस्कृति विरोधी मानस कान खोलकर सुन ले कि भारतीय संस्कृति की अमूल्य धरोहर अमर देववाणी संस्कृत प्राचीनतम वैदिक काल से लेकर आज तक फल-फूल रही है तथा अपने लोक मंगलकारी रूप में विद्यमान है।

संस्कृत भाषा का विरोध करने वाले ये लोग इसको मात्र पूजा पाठ की भाषा समझते हैं। आधुनिक युग में इसके ज्ञान का कोई औचित्य स्वीकृत करने में इन्हें लज्जा आती है। इनका तर्क है कि आज वैश्विक बाजार में सम्पर्क भाषा के रूप में अंग्रेजी का वर्चस्व है तथा संस्कृत का जमाना लद गया है। जबकि सच यह है कि आज कम्प्यूटर में सर्वाधिक उपयोगी संस्कृत भाषा है। 'संयुक्त राष्ट्र संघ' ने 'वेद' को सृष्टि का ज्ञान स्वीकार कर अपने 'ग्रन्थागार' में ऋग्वेद को सुशोभित किया है। वेदों में विज्ञान बीज रूप में विद्यमान है। उसके सिद्धान्त भौतिक विज्ञान के आधुनिक सिद्धान्तों से साम्य रखते हैं। वेद संस्कृत भाषा में हैं जो विश्व में सभी भाषाओं की जननी स्वीकार की गई है। ये

लोग तो विश्व जननी संस्कृत के साथ-साथ राष्ट्रीय भगिनी, पुत्री, माथे की बिन्दी हिन्दी के भी उतने ही विरोधी हैं। संभवत: इन्हें नहीं मालूम- यदि इनकी दृष्टि में अंग्रेजी हमें विश्व से जोड़ती है तो हिन्दी माथे की बिन्दी बनकर भारत को जोड़ती है तथा संस्कृत हमें ब्रह्माण्ड से जोड़ती है। संस्कृत ही एक ऐसी भाषा है जो आत्मा का परमात्मा से मिलन करवाती है। अन्य भाषाओं में इतनी अद्‌भुत शक्ति नहीं है, जितनी संस्कृत में है। अंग्रेजों ने संस्कृत को नष्ट करने के लिए भरसक प्रयत्न किए और इसे मृतभाषा का नाम दिया लेकिन जब पाश्चात्य विद्वानों ने यहां आकर संस्कृत का गहन अध्ययन किया तो उन्हें पता चला कि यह भाषा लातीनी भाषा से भी समृद्ध है, और यूनानी भाषा से भी सुन्दर है। इस वैज्ञानिकी भाषा का व्याकरण अद्‌भुत तथा श्लिष्ट है। संस्कृत की अप्रतिम राशि वेदों, उपनिषदों, वेदांगों में ऐसा कोई विषय नहीं है जो अनछुआ रहा है। संस्कृत में कामशास्त्र से लेकर चिकित्सा शास्त्र तक सभी आधुनिक विधाओं का विस्तृत वर्णन है। फिर संस्कृत के पठन-पाठन व प्रचार-प्रसार को बढ़ावा देने पर इन विरोधी मानसों के पेट में दर्द क्यों?

आज दुनिया में सबसे अधिक लोग मंडारिन भाषा का उपयोग करते हैं जो चीन, ताइवान, सिंगापुर, मलेशिया आदि देशों में बसते हैं। इनकी प्रतिशतता 14.4 है। इसके बाद विश्व में सबसे अधिक बोली जाने वाली भाषा हिन्दी की स्थिति 12.55 प्रतिशत है, जो भारत, नेपाल, फिजी, मॉरिशस आदि देशों में बोली जाती है। अब अन्य देशों में हिन्दी सीखने और बोलने की पसन्द बढ़ने लगी है। इतना होने के बावजूद भी इस देश में कथित संभ्रान्त लोगों का एक समूह है जो हिन्दी को लेकर हीन भावना रखता है। दक्षिणपन्थी इन लोगों से यदि पूछा जाए कि बोलो क्या ऋषिवर दयानन्द तुम्हारा नहीं था? जिसने हिन्दी को राष्ट्रभाषा माना था तथा राष्ट्र को ऐक्य सूत्र में जोड़ने वाली सर्वाधिक उपयुक्त भाषा स्वीकार किया था?

अंग्रेजी बोलने वाले लोगों की संख्या विश्व में यद्यपि 5.43 प्रतिशत ही है लेकिन हौवा बड़ा है। शेखी बघारने वाले, डींग मारने वाले अंग्रेजी के हिमायती इन लोगों को मालूम होना चाहिए कि अंग्रेजी भाषा की जननी भी संस्कृत है। अंग्रेजी संस्कृत भाषा की एक प्राकृत बोली है। लैटिन, फ्रांसीसी, ग्रीक, फ्रेंच, अरबी, जर्मन भाषा का शब्द भण्डार संस्कृत भाषा से व्युत्पन्न है।

संस्कृत अंग्रजी और जर्मन

सर्वप्रथम उदाहरणत: अपर (Upper) शब्द को लीजिये। इसकी वर्तनी से स्पष्ट हो जाना चाहिए कि इसका मूल उच्चारण ऊपर (Oopper) है। यह इसी रूप में हिन्दी और संस्कृत में प्रयोग होता है। तथापि कोई भी अंग्रेजी शब्दकोश आपको यह जानकारी नहीं देगा कि 'अपर' एक संस्कृत शब्द है। माऊस (Mouse) यदि ध्वन्यात्मक रूप में उच्चारण किया जाए तो मूस (Moos) बोला जाएगा। फिर यह समझना कठिन नहीं होगा कि यह शब्द तो संस्कृत के 'मूषक' शब्द का खण्डित रूप है। अंग्रेजी का स्वेट (Sweat) संस्कृत का स्वेद शब्द है। संस्कृत में 'नाम' अंग्रेजी में नेम (Name) है। अंग्रेजी में यह अन्य शब्दों के साथ भी प्रयुक्त होता है। यथा-सियूडोनिम (छद्‌मनाम) एन्टोनिम (विलोम नाम) आदि। अंग्रेजी के Known और Unknown शब्दों को ध्वन्यात्मक रूप में उच्चारण किये जाने पर स्पष्ट हो जाएगा कि ये दोनों संस्कृत भाषा के 'ज्ञान' और 'अज्ञान' शब्द ही हैं। Truth और Untruth की संस्कृत मूलक कहकर व्याख्या नहीं की जाती। लेकिन अंग्रेजी शब्दकोश की शब्द व्युत्पत्ति सम्बन्धी घोर त्रुटि का यह एक उदाहरण है। इन दोनों शब्दों में से 'T' अक्षर निकाल दीजिए; तुरन्त Ruth (ऋत) और Unruth (अनृत) शब्द प्राप्त हो जाएंगे जो संस्कृत शब्द हैं। यह सिद्ध करता है कि अंग्रेजी का 'T' अक्षर संस्कृत शब्दों में अन्तर्क्षेपक है।

अंग्रेजी का Hunt, Hunter और Hunting भी संस्कृतमूलक शब्द हैं। हन्ता, हन्तारौ और हन्तार: (हन् धातु के ये शब्द रूप हैं-मारने वाला, दो मारने वाले, कई मारने वाले) इन शब्दों से स्वत: स्पष्ट है। अंग्रेजी का मीटर (Metre) संस्कृत भाषा का मात्र शब्द है। Soup (सूप) यह एक संस्कृत शब्द है। लैटिन Sandalum और अंग्रेजी Sandal संस्कृत के 'चन्दन' शब्द के अपभ्रंश रूप हैं। अंग्रेजी का Sugar शब्द, प्राचीन फ्रांसीसी Zuchre शब्द, ग्रीक Sakkharon आदि शब्द संस्कृत भाषा के 'शर्करा' शब्द से व्युत्पन्न हैं। देशी खाण्ड का अर्थद्योतक अंग्रेजी Jaggery शब्द भी शर्करा का अशुद्ध उच्चारण है। अंग्रेजी Tutty शब्द, फ्रेंच Titie तथा अरबी भाषा का Tutiya आदि शब्द संस्कृत के ''तुत्थ'' शब्द से ही निकले हैं। संस्कृत में तृषा, अंग्रेजी में Thurst और संस्कृत का त्रिंशत् शब्द Thirty बना है। अंग्रेजी Pepper शब्द, लैटिन Piper तथा ग्रीक Peperi आदि शब्द संस्कृत भाषा के 'पिप्पलि' शब्द से उत्पन्न हैं। अंग्रेजी Orange शब्द, अरबी में 'नारंज' और संस्कृत में 'नारंग' है। फ्रेंच, स्पेनिश और फारसी में 'लीलक' शब्द संस्कृत भाषा का 'नीलक' शब्द है। अंग्रेजी में Ginger, लैटिन में Gingiber शब्द है जो संस्कृत में 'शृंगवेर' शब्द से बने

हैं। संस्कृत के 'खाण्ड' शब्द से ही अंग्रेजी Candy शब्द, फ्रैंच Candi और अरबी में 'कन्द' शब्द है। अंग्रेजी में Bery, ग्रीक में Berullos है जो संस्कृत के 'वैदूर्य' शब्द से व्युत्पन्न हैं। नीलवर्ण का द्योतक अंग्रेजी और स्पेनिश में Anil, अरेबिक भाषा में Al-nil है जो संस्कृत शब्द 'नील' से बने हैं।

इसी प्रकार Aggressar एक संस्कृत शब्द है क्योंकि अग्र (Agra) का अर्थ आगे और सर (Sar) का अर्थ चलना है। संस्कृत शब्द नासिका अपभ्रंश रूप होकर अंग्रेजी में Nose हो गई और उससे Nasal जैसे शब्द बन गए हैं। पैर के अर्थद्योतक संस्कृत के पाद शब्द से ही अंग्रेजी के Biped (द्विपाद) Tripod (त्रिपाद) आदि शब्द मिलते हैं। अंग्रेजी भाषा का Myth शब्द, संस्कृत भाषा का 'मिथ्या' शब्द है जिसका अर्थ झूठा है। अंग्रेजी Peter शब्द, संस्कृत में पितर शब्द से व्युत्पन्न है। अंग्रेजी का Cough संस्कृत का 'कफ' शब्द है। यद्यपि संस्कृत का कफ शब्द बलगम का द्योतक है और अंग्रेजी Cough शब्द इससे तनिक भिन्न है तथापि यह देख सकना कठिन नहीं है कि Cough बलगम (कफ) से ही उत्पन्न होता है। पथ (Path) का अंग्रेजी और संस्कृत दोनों में ही समान अर्थ है, यद्यपि उच्चारण में अति-सूक्ष्म अन्तर हो गया है। अंग्रेजी का सम्मानसूचक सम्बोधन Sir संस्कृत के 'श्री' शब्द का अपभ्रंश उच्चारण है। इस प्रकार अनेक भाषाओं के शब्द संस्कृत भाषा से व्युत्पन्न हैं। लेख विस्तारभय से यहाँ केवल चन्द शब्दों द्वारा ही संस्कृत भाषा के महत्त्व को दर्शाया गया है। स्पष्ट है हर भाषा के शब्दों में संस्कृत समाई है इसे नकारा नहीं जा सकता। विश्व में बोली जाने वाली भाषाओं में जर्मन भाषा ११वें स्थान पर सिसक रही है, किन्तु कुलीन कहाने वाले इसे इस देश की संस्कृति की संवाहक संस्कृत से अधिक वरीयता दे रहे हैं।

वस्तुतः ऐसे लोग मैकाले/मार्क्स के मानस पुत्र हैं। इस देश की शिक्षा पद्धति आज भी पाश्चात्य संरक्षण लिए हुए दिखलाई पड़ती है। यह शिक्षा पद्धति मैकाले की नीति पर चल रही है, जिसने अंग्रेजी माध्यम को ब्रिटिश औपनिवेशिक हितों को साधने के लिए लागू किया था। उसका लक्ष्य अंग्रेजी भाषा और रहन-सहन से युक्त भारतीय वर्ग का सृजन करना था जो स्थानीय स्तर पर ब्रितानियों का पक्षधर बनता। आजादी के बाद शिक्षा पद्धति में आमूलचूल परिवर्तन किए जाने की आवश्यकता थी लेकिन अंग्रेजी शिक्षण-पद्धति के हामी पं० नेहरू जैसे नेताओं ने संस्कृत के प्रति उदासीन रवैया रखा और इनकी छत्रछाया में अंग्रेजी पलती-बढ़ती पैर जमाकर बैठ गई। अंग्रेजी के प्रबल पक्षधर नेहरू सरीखे नेताओं ने शीर्ष पद पर बैठकर भी शीर्ष शिक्षण नियामक संस्थानों को ऐसे हाथों में सौंपा जो इस द्वारा की संस्कृति से विरक्त थे।

संस्कृत की समृद्ध विरासत

देश की समृद्ध संस्कृति, आचार-विचार की शिक्षा, जीवन मूल्य और दर्शन हमारे ग्रन्थों में समाहित हैं, जिन्हें हमारे ऋषि-महर्षियों-मनीषियों ने संस्कृत भाषा में संकलित कर रखा है। उस समृद्ध विरासत को समझने और उसे अगली पीढ़ी तक प्रवाहित करने के लिए संस्कृत भाषा एक माध्यम है। ज्ञान का भण्डार है। संस्कृत संजीवनी है। संस्कृत और हमारी संस्कृति अभिन्न है। संस्कृत में आकाश जैसा विस्तार और समुद्र जैसी गहराई है। संस्कृत के सागर में यदि कोई मनुष्य गोता नहीं लगा सकता तो उसका पानी उसे अपने ऊपर अवश्य छिड़कना चाहिए।

संस्कृत भाषा की वैज्ञानिकता

संस्कृत विज्ञान की भाषा है। वेद भारतीय संस्कृति का सर्वस्व हैं। वेद शब्द 'विद्' धातु से उत्पन्न है, जिसका अर्थ 'जानना' है। हमारे ऋषियों ने जिन्हें 'कवि' अर्थात् 'सत्य का द्रष्टा' कहते थे, प्रकृति के रहस्यों को खोज निकाला था, जिनके द्वारा जगत् पर प्रभुत्व प्राप्त किया जा सकता है। वेदों में विज्ञान भी एक क्रमबद्ध ज्ञान है। भौतिक विज्ञान वह विज्ञान है जो प्रकृति के रहस्यों को खोजता है। ग्रीक भाषा के फिजिक्स शब्द का अर्थ ही तो संस्कृत में आधिभौतिक विद्या है।

ऋग्वेद के १०/८५/१ मन्त्र में गुरुत्वाकर्षण का कितना सुन्दर उल्लेख है। ऋग्वेद के १/३३/८ मन्त्रांश में प्राचीन ज्योतिषियों ने चन्द्र, पृथ्वी, सूर्य तथा अन्य ग्रहों की स्थिति के सम्बन्ध में जो घोषणाएँ कीं, वे सर्वथा सत्य हैं। ऋग्वेद के मण्डल २० सूक्त २६ की ऋचा २ में स्पष्ट उल्लेख है कि अग्नि द्युलोक, अन्तरिक्ष, पृथ्वी, विद्युत्, वायु और चारों दिशाओं में व्याप्त है। यही जल में विद्युत् है, मेघ में बिजली, मनुष्यों में स्फूर्ति, पत्थरों में चिंगारी,

स्वामी भीष्म स्मृति समारोह

४-५ अप्रैल २०१५

स्थान :

स्वामी भीष्म भवन, घरौंडा,

जिला करनाल, (हरियाणा)

संयोजक :

शिवकुमार आर्य, दूरभाष ०९७२९०७२६९६

वृक्ष-वनस्पतियों में ऊष्मा, पशु-पक्षियों में ऊर्जा है। ऋग्वेद के मन्त्र ३/१४/१ में विद्युत् से चलने वाले वाहन का वर्णन है। ९/१४/१ मन्त्र में कार बनाने का उल्लेख है। विमान नामक यन्त्र का वर्णन तो अनेक शास्त्रों में है। ऋग्वेद के १/११६/१, २,३,४,५, ३/२६/७, २/४०/३ मन्त्रों में यानों की अनेक विधाओं का वर्णन है। अन्तरिक्ष यात्रा के लिए ऋग्वेद के ८/५८/३, १/१५७/३, ४/३६/२ आदि अनेक मन्त्रों में यान सम्बन्धी चर्चा है। फिर ये लोग कैसे कह रहे हैं कि संस्कृत वैज्ञानिकी भाषा नहीं है। वस्तुतः संस्कृत विरोधी ये मानस वेद ज्ञान से वञ्चित हैं। पाश्चात्य विद्वान् भी इस बात को स्वीकार करते हैं कि वेद अथाह ज्ञान के भण्डार हैं।

शब्द-भण्डार

संसार में संस्कृत से बढ़कर किसी भाषा में इतने शब्द नहीं हैं। उदाहरणः यदि हम पृथ्वी के पर्यायवाची शब्दों पर विचार करें तो संस्कृत में भूमि, वसुधा, वसुन्धरा, अवनि, क्षितिः, भूः, धरा, धरित्री, क्षोणी, पृथिवी, वसुमती, अवनी, मेदिनी, धरणी, मही, धरणिः, मही, अचला, अचलकीला, स्थिरा, इड़ा आदि अनेक शब्द हैं लेकिन किसी दूसरी भाषा में इतना सामर्थ्य नहीं है। अन्य भाषाओं पर गर्व करने वाले इन संस्कृत विरोधियों से हम पूछना चाहते हैं कि आपके फादर, पिदर, मदर, मादर, ब्रदर, बिरादर आदि शब्द किस धातु से बने हैं तो वे कुछ भी न बता सकेंगे। संस्कृत जैसी बोली जाती है वैसी लिखी भी जाती है, यह इसकी विशेषता है। जबकि अंग्रेजी जैसी भाषाओं में यह विशिष्टता नहीं है।

अर्थ-विज्ञान

भाषा वही है जिसमें शब्दार्थ सम्बन्ध नित्य है। जिस शब्द से जो पदार्थ जाना जाए, वही उस शब्द का वास्तविक अर्थ है। इस प्रकार शब्दार्थ सम्बन्ध नित्य है। यह गुण केवल संस्कृत भाषा में है। संसारमात्र की शेष बोलियाँ उसका विकार अथवा अपभ्रंश हैं। संस्कृत भाषा की शब्द राशि विपुल है। यदि संस्कृत का पुरातन वाङ्मय खोजा जाए तो पृथ्वी की अनेक बोलियों के मूल शब्द जिनका इस समय ज्ञान हमें न भी हो तो मिल जाएंगे।

उदाहरणतः धातु पाठ में कल्ल-अव्यक्ते शब्दे धातु है। संस्कृत में इसका प्रयोग अन्वेषणीय है। पोठाहार बोली में कल्ला शब्द गूंगे अथवा बधिर (बहरा) के अर्थ में इस समय भी प्रयुक्त होता है। बाप (बोने वाला) शब्द पिता के अर्थ में संस्कृत कोशों में मिलता है। ग्रन्थों में यह शब्द हमारे देखने में नहीं आया। हिन्दी और पंजाबी भाषा में बाप शब्द पिता के अर्थ में सम्प्रति प्रयुक्त होता है। गर्त्त शब्द गढ़ा अर्थ में संस्कृत में मिलता है। तैत्तिरीय सँहिता भाष्यकार भट्ट भास्कर मिश्र किसी पुरातन निघण्टु के आधार पर गर्त्त का रथ अर्थ भी देता है। यास्कीय निरुक्त ३/५ में भी गर्त्त का अर्थ रथ माना गया है। इस रथ अर्थ वाले गर्त्त शब्द से पंजाबी का गड्ड शब्द बना है। जहाँ तक

(शेष पृष्ठ ३२ पर)

जीवन-पथ

❒दाताराम आर्य 'आलोक'

पथिक मत रुक अभी, न पथ खोया न पाँव गये।

हो रहा प्राणों का संचार,
दे सकता कौन फिर हार,
दे दस्तक हर संकट-द्वार,
चला जा समुद्र चीर उस पार,
अंगारों को कर दे पानी, दिखा दे दांव नये।।

तेरे सम्मुख लाखों विकल्प,
मन में कर पक्का संकल्प,
पेश कर जल्दी ऐसा शिल्प,
याद करते रहें युग और कल्प,
जिनकी शोभा हो धर्म ईमान, बसा दे गांव नये।।

पग पग पर हो लाखों शूल,
आंधी चले उड़ाती धूल,
चाहे धरती भी जाए झूल,
मत अपने लक्ष्य को भूल,
बिखेरता चल मधुर मुस्कान, सह कर घाव नये।।

सूर्य उगा दे पश्चिम से,
'आलोक' पैदा कर दे तम से,
शब्द तू मिटा दे दुख, गम से,
तुमको टकराना यम से,
है कितनी दूर तेरा लक्ष्य, माप दे पाँव रहे।।

-ग्रा० पो० बुटेरी, तह०बानसूर, अलवर, राज-३०१४०२

सत्यार्थ प्रकाश : एक कालजयी ग्रंथ

सत्यार्थ प्रकाश जहाँ वैचारिक दृष्टि से एक युगान्तरकारी ग्रंथ है, वहीं महर्षि की अद्‌भुत प्रतिभा का परिचायक भी है, वेदभाष्यकार के रूप में भी ऋषि का स्थान सर्वोपरि है। इस संबंध में बहुश्रुत विद्वान् **आचार्य डॉ० सत्यव्रत सिद्धान्तालंकार** का पठनीय एवं मननीय लेख प्रस्तुत है- संपादक

ऋषि दयानन्द जिस समय १८६० में गुरु विरजानन्द जी के पास विद्याध्ययन के लिए पहुंचे, उस समय उनकी आयु ३६ वर्ष की थी। १८६३ में उन्होंने अपने गुरु से दीक्षा ली और उनके पास से अध्ययन समाप्त कर जीवन-क्षेत्र में उतर पड़े। इस समय वे ३९-४० वर्ष के हो चुके थे। विरजानन्द जी के पास उन्होंने जो कुछ सीखा, वही उनकी वास्तविक शिक्षा थी, क्योंकि इससे पहले वे जो कुछ पढ़ आये थे उसे विरजानन्द जी ने भुला देने की उनसे प्रतिज्ञा ली थी। इस प्रकार ऋषि दयानन्द जी की यथार्थ शिक्षा १८६० से १८६३ तक -अर्थात् कुल तीन वर्ष हुई थी। उन्होंने पीछे चलकर अपने जीवनकाल में जितने व्याख्यान दिये, जितने ग्रंथ लिखे, जितने शास्त्रार्थ किये, वह इन तीन वर्षों के अध्ययन का ही परिणाम था। इसी से स्पष्ट है कि तीन सालों में उन्होंने जो पाया था वह कितना मूल्यवान था।

अपने गुरु विरजानन्द जी से ऋषि दयानन्द जो गुर पाया था वह आर्ष तथा अनार्ष ग्रंथों में भेद करना था। ३६ वर्षों की आयु से पहले उन्होंने जो कुछ पढ़ा था, वह अनार्ष ग्रंथों का अध्ययन था। आर्ष-ग्रंथों के अध्ययन ने उनके जीवन, उनके विचारों में जो क्रांति उत्पन्न कर दी उससे भारत के पिछले वर्षों का इतिहास बन गया।

इस क्रांति का मूल स्रोत सत्यार्थ प्रकाश है। सत्यार्थ प्रकाश १८७४ में लिखा गया। मुरादाबाद के राजा जयकृष्णदास जी काशी में डिप्टी कलेक्टर थे। तब ऋषि दयानन्द काशी पधारे। राजा जयकृष्ण दास ने ऋषि से कहा- आपके उपदेशामृत से वे ही व्यक्ति लाभ उठा सकते हैं जो आपके व्याख्यान सुनते हैं। जिन्हें आपके व्याख्यान सुनने का अवसर नहीं मिलता, उनके लिए अगर आप विचारों को ग्रंथ रूप में लिख दें, तो जनता का बड़ा उपकार हो। ग्रंथ के छपने का भार राजा जयकृष्णदास ने अपने ऊपर ले लिया। यह आश्चर्य की बात है कि यह बृहत्काय तथा महत्त्वपूर्ण ग्रंथ जिसे पं० गुरुदत्त विद्यार्थी ने १४ बार पढ़कर कहा कि हर बार उन्हें नया रत्न हाथ आता है, कुल साढ़े तीन मास में लिखा गया।

केवल तीन मास में

सत्यार्थप्रकाश का गहराई से अध्ययन करने पर पता चलता है कि इसमें ३७७ ग्रंथों का हवाला है। इस ग्रंथ में १५४२ वेदमन्त्रों या श्लोकों के उद्धरण दिये गये हैं। चारों वेद, सब ब्राह्मण ग्रंथ, सब उपनिषद्, छहों दर्शन, अठारह स्मृति, सब पुराण, सूत्र ग्रंथ, जैन बौद्ध ग्रंथ, बायबल, कुरान-इन सबके उद्धरण ही नहीं, उनके रेफरेंस भी दिये गये हैं। किस ग्रंथ में, कौन सा मन्त्र या श्लोक या वाक्य कहाँ है, उसकी संख्या क्या है, यह सब कुछ इस साढ़े तीन महीनों में लिखे ग्रंथ में मिलता है। आज का कोई रिसर्च स्कॉलर अगर किसी विश्वविद्यालय की संस्कृत की अप-टु-डेट लायब्रेरी में, जहाँ सब ग्रंथ उपलब्ध हों, इतने रेफरेंस

सत्यार्थ प्रकाश क्यों पढ़ें ?

❍ यदि किशोर पढ़ेंगे तो उनके जीवन का मार्ग प्रशस्त होगा, उन्हें अपना शारीरिक व बौद्धिक विकास करने की, उठने की प्रेरणा मिलेगी।

❍ इसे तरुण पढ़ें- ताकि इससे निर्दिष्ट जीवन दिशा के द्वारा अपना भविष्य बना सकें।

❍ गृहस्थ व प्रौढ़जन पढ़ें- ताकि जीवन यापन करते समय व्यवहार में हो जाने वाली त्रुटियों व दोषों को जान, अपना सुधार कर सकें।

❍ वृद्धजन पढें- ताकि वर्तमान जीवन में अपनी बुद्धि, योग्यता व सामर्थ्य के अनुसार अपने किये कर्मों का स्मरण कर आगामी जीवन को उत्तम बनाने का प्रयत्न करें।

❍ ब्रह्मचारी, विद्यार्थी पढ़ें- ताकि सूक्ष्म व उत्तम विद्या को ग्रहण कर, अपने जीवन की नींव पक्की कर सकें।

❍ इसे सनातन वैदिक धर्मी पढ़ें- ताकि अपने धर्म के वास्तविक स्वरूप को जान सकें।

❍ इसे सभी मतों, धर्मों, सम्प्रदायों को मानने वाले व्यक्ति पढ़ें- ताकि सभी मतों का तुलनात्मक अध्ययन कर सत्य और असत्य का निर्णय कर सकें।

वाला कोई ग्रंथ लिखना चाहे तो भी उसे सालों लग जायें, जिसे ऋषि दयानन्द ने साढ़े तीन महीनों में तैयार कर दिया था। साधारण ग्रंथ की बात दूसरी है, सत्यार्थप्रकाश एक मौलिक विचारों का ग्रंथ है। ऐसा ग्रंथ- जिसने समाज को एक सिरे से दूसरे सिरे तक हिला दिया। जिन ग्रंथों ने संसार को झकझोरा है, उनके निर्माण में सालों लगे हैं। कार्ल मार्क्स ने ३४ वर्ष इंग्लैंड में बैठकर 'कैपिटल' ग्रंथ लिखा था, जिसने विश्‍व में नवीन आर्थिक दृष्टिकोण को जन्म दिया। किन्तु ऋषि दयानन्द ने 'सत्यार्थ प्रकाश' साढ़े तीन महीनों में लिखा था, जिसने नवीन सामाजिक दृष्टिकोण को जन्म दिया। मार्क्स के ग्रंथ ने यूरोप का आर्थिक ढांचा हिला दिया, ऋषि दयानन्द के ग्रंथ ने भारत का सांस्कृतिक तथा सामाजिक ढांचा हिला दिया।

क्रांतिकारी विचारों का खजाना

सत्यार्थप्रकाश चुने हुए क्रांतिकारी विचारों का खजाना है- ऐसे विचारों का- जिन्हें इस युग में कोई सोच भी नहीं सकता था। समाज की रचना जन्म के आधार पर न होनी चाहिए- सत्यार्थ प्रकाश का यही एक विचार इतना क्रांतिकारी है कि इसके व्यवहार में आने से हमारी ९० प्रतिशत समस्याएं हल हो जाती हैं। ऐसे संगठन में जन्म से न कोई ऊँचा, न कोई नीचा; जन्म से न कोई गरीब, न कोई अमीर! जो कुछ हो, कर्म से हो।-ऐसी स्थिति में कौन सी समस्या है, जो इस सूत्र से हल नहीं हो जाती।

शिक्षा क्षेत्र में गुरुकुल शिक्षा प्रणाली का विचार सत्यार्थप्रकाश की ही देन है, जिसे पकड़ कर उत्तर भारत में जगह-जगह गुरुकुलों का जाल बिछ गया। आज भी हमारी शिक्षा प्रणाली की जो छीछालेदर हो रही है, उसका इलाज गुरुकुल शिक्षा प्रणाली में ही निहित है।

लोकमान्य तिलक ने कहा था- 'स्वराज्य हमारा जन्मसिद्ध अधिकार है।' दादाभाई नौरोजी ने 'स्वराज्य' शब्द का प्रयोग किया था। इस सबसे पहले ऋषि दयानन्द ने सत्यार्थप्रकाश के ८वें समुल्लास में लिखा था- 'कोई कितना ही कहे, परन्तु जो स्वदेशीय राज्य होता है, वह सर्वोपरि उत्तम होता है।' ऋषि दयानन्द के ये वाक्य उस जगत् प्रसिद्ध अंग्रेजी वाक्य से, जिसमें कहा गया था- 'Good government is no substitute for self-government' - इतने मिलते जुलते हैं कि १८७४ में अंग्रेजों के राज्य में कोई व्यक्ति यह लिखने का साहस कर सकता था-यह जानकर आश्‍चर्य होता है।

आज जिन समस्याओं को लेकर हम उलझे हैं, हरिजनों की समस्या, स्त्रियों की समस्या, गरीबी की समस्या, शिक्षा की समस्या, देशभाषा की समस्या, चुनाव की समस्या, नियम तथा व्यवस्था की समस्या, गोरक्षा की समस्या। -कौन सी समस्या है, जिसका हल सत्यार्थप्रकाश में मौजूद नहीं है? और कौन सा ऐसा हल आज के राजनीतिज्ञों ने ढूँढ निकाला है जो सत्यार्थ प्रकाश में पहले से नहीं है।

दयानन्द महान् था

❑डी.सी. विकास

चहुंदिश क्रन्दन
दु:खित सर्वजन
रुढियाँ शिखर पर
अशिक्षा घर-घर
दुर्दशा में गौ माता
नारी से दासी का नाता
ईश वन्दना थी समाप्त
कण-कण में था ढोंग व्याप्त
माँ भारती कराह रही थी
देवभूमि गर्त में जा रही थी
आंग्ल-शासन अन्यायपूर्ण
राष्ट्रभावना घोर अपूर्ण
ऋषि-गर्भा तब हुई प्रसवित
ज्ञान-सूर्य हुआ उदित
गुरु विरजानन्द के स्नेहांगन में
वेद-सुधा ग्रहित तन-मन में
योद्धा संन्यासी से, ढोंगी सब घबराने लगे
पताका पाखण्ड खण्डिनी से पाखण्डी थर्राने लगे
नारी शिक्षा, गौ सेवा, यज्ञों का विधान किया
वेद-ज्ञान-योग से सत्य का प्रमाण दिया
समाप्त-प्राय: संस्कृति पा गई नवीनता
गर्वित भारतीय हो गए, त्याग करके दीनता
उत्सर्ग प्राणों का, राष्ट्रहित में कर गए
सृष्टि विसर्जन की घड़ी तक ज्ञान-धरोहर धर गए
ज्ञान-राशि वीर संन्यासी उद्धारक बलवान था
तर्क-शर प्रखर निरन्तर दयानन्द महान् था।

-816, न्यू हाऊसिंग बोर्ड कॉलोनी, जीन्द हरि.-26102

वेद-भाष्यकार के रूप में दयानन्द की अनुपम देन

❑आचार्य डॉ० सत्यव्रत सिद्धान्तालंकार

कोई समाज अपने भूत के बिना नहीं जी सकता। भूत में पैर जमाकर भविष्य की तरफ बढ़ना। पीछे भी देखना, आगे भी देखना- यही किसी समाज के जीवन का गुर है। ऋषि दयानन्द ने इसी गुर को पकड़ा था।

वेदों के नाम पर

हिन्दू समाज की सबसे बड़ी समस्या वेदों की थी। यहाँ हर कोई हर बात के लिए वेदों का नाम लेता था। स्त्रियों तथा शूद्रों को वेद पढ़ने का अधिकार क्यों नहीं? क्योंकि वेदों में लिखा है-'स्त्रीशूद्रौ नाधीयताम्'। बाल विवाह क्यों होना चाहिए? क्योंकि वेदों में लिखा है- 'अष्टवर्षा भवेत् गौरी नववर्षा च रोहिणी। दश वर्षा भवेत् कन्या तत ऊर्ध्वं रजस्वला।। माता चैव पिता चैव ज्येष्ठो भ्राता तथैव च, त्रयस्ते नरकं यान्ति दृष्ट्वा कन्यां रजस्वलाम्। जन्म से वर्ण व्यवस्था क्यों माने? क्योंकि वेद में लिखा है- 'ब्राह्मणोऽस्य मुखमासीत्'- ब्राह्मण परमात्मा के मुख से और शूद्र उसके पांव से उत्पन्न हुए हैं। जैसे मुख बाहू और बाहू मुख नहीं बन सकता, इसी प्रकार ब्राह्मण शूद्र तथा शूद्र ब्राह्मण नहीं बन सकता। जब ऋषि दयानन्द ने यह देखा कि वेदों का नाम लेकर हर संस्कृत वाक्य को वेद कहा जा रहा है, और वेदों का उद्धरण देकर वेदमन्त्रों का अनर्थ किया जा रहा है, तब उन्होंने निश्चय कर लिया कि वेदों को ही केन्द्र बनाकर हिन्दू समाज की रक्षा की जा सकती है, और वह रक्षा तभी की जा सकती है जब जन साधारण की समझ में आ जाये कि वेदों में क्या कहा गया है। ऋषि दयानन्द ने वेदों से ही वेदों के नाम पर हो रहे अनर्थों पर प्रहार किया।

वैदिक वाङ्मय के संबंध में ऋषि दयानन्द की खोज यह थी कि हर संस्कृत वाक्य तथा हर संस्कृत ग्रंथ वेद नहीं है। ब्राह्मण ग्रंथ, उपनिषद्, स्मृति, पुराण, सूत्र-ग्रंथ -ये सब वेद नहीं हैं। इन ग्रंथों में जो कुछ लिखा है, वह अगर वेद-विरुद्ध है तो वह त्याज्य है। जो वेदानुकूल है, वही ग्राह्य है। ऋषि दयानन्द का हिन्दू समाज को कहना यह था कि अगर वेद को तुम अपनी संस्कृति का आधार मानते हो, तो इस पैमाने को लेकर चलना होगा। तुम जो चाहो, वह वेद नहीं है; वेद जो है, वह मानना होगा। इस कसौटी पर कसने से हिन्दू समाज की ९० प्रतिशत रूढ़ियाँ अपने आप गिर जाती हैं। इस विचारधारा को प्रकट करने के लिए उन्होंने दो शब्दों का प्रयोग किया- आर्ष ग्रंथ तथा अनार्थ ग्रंथ। अब तक संस्कृत साहित्य में इस दृष्टि को किसी ने नहीं अपनाया था। संस्कृत के हर ग्रंथ में जो कुछ लिखा मिलता था, वह प्रमाणित मान लिया जाता था। ऋषि दयानन्द ने इस विचार को ठोकर मारकर गिरा दिया।

वेदों के शब्द रूढ़िज नहीं

वेदों के सम्बन्ध में ऋषि दयानन्द की दूसरी खोज यह थी कि वेदों के शब्द रूढ़िज नहीं, यौगिक हैं। यद्यपि यह विचार नया नहीं था, निरुक्तकार का भी यही कहना था। तो भी वेदों के सभी भाष्यकारों ने वैदिक शब्दों के रूढ़ि अर्थ ही किये थे। सायण, उव्वट, महीधर तथा उनके पीछे चलते हुए पाश्चात्य विद्वानों- मैक्समूलर, राथ, विल्सन, ग्रासमैन ने मक्खी पर मक्खी मार अनुवाद किया था। सायण आदि एक तरफ तो वेदों को ईश्वरीय ज्ञान मानते थे- दूसरी ओर उनमें इतिहास भी मानते थे, जो वेदों के ईश्वरीय ज्ञान होने के सिद्धांत से टकराता था। इस बात की उन्हें कोई चिन्ता नहीं थी।

असल में सायण का भाष्य किसी गंभीर विद्वता से नहीं किया गया था, वह एक विशिष्ट लक्ष्य को सामने रखकर किया गया था। दक्षिण के विजयनगरम् हिन्दू राज्य के राजा हरिहर और बुक्का के वे मन्त्री थे। मुस्लिम संस्कृति राज्य में प्रतिष्ठित न हो जाये, इसलिए संस्कृत वाङ्मय का प्रसार करना मात्र इस भाष्य का उद्‌देश्य था। यही कारण था कि सायण या महीधर के भाष्य गहराई तक नहीं गये और असंगत बातों के शिकार रहे। वह यज्ञों का समय था, इसलिए भाष्यकार समझते थे कि वेदों के अग्नि, वायु, इन्द्र आदि देवता सचमुच स्वर्ग से यज्ञों में पधारते हैं और दान दक्षिणा आदि लेकर तथा यजमान को आशीर्वाद देकर स्वर्ग चले जाते हैं। पाश्चात्य विद्वानों को यह बात अपनी विचारधारा के अनकूल जान पड़ती थी। उनका विचार विकासवाद पर आश्रित था। आदि में मानव जंगली था। जंगली आदमी सूर्य को, अग्नि को, वायु को देवता समझकर पूजे तो यह युक्तियुक्त प्रतीत होता है। पाश्चात्य विद्वान कहने लगे कि वैदिक ऋषि क्योंकि जंगली थे, इसलिए अनेक देवताओं को

(शेष पृष्ठ ३१ पर)

।। अहिंसा और हिंसा का सत्य ।।

❑महात्मा ओम्मुनि, वैदिक भक्ति साधन आश्रम, आर्यनगर, रोहतक (हरियाणा)

जिस प्रकार सारे क्लेशों व दु:खों का मूल अविद्या है, उसी प्रकार सारे यमों का मूल अहिंसा है। हिंसा तीन प्रकार की होती है- 1. शारीरिक पीड़ा/कष्ट पहुँचाना, 2. मानसिक क्लेश पहुँचाना, 3. आध्यात्मिक- अन्त:करण को दूषित करना। यह राग-द्वेष, काम, क्रोध, लोभ, मोह व ज़यादि तमोगुण वृत्ति से मिश्रित होती हैं। हिंसक व्यक्ति अन्य किसी की हिंसा करने के साथ-2 अपनी आत्मिक हिंसा भी करता है, अर्थात् अपने अन्त:करण को क्लिष्ट संस्कारों से दूषित करता है। इन तीनों प्रकार की हिंसाओं में सबसे बड़ी हिंसा आध्यात्मिक हिंसा है, जैसा कि यजुर्वेद के 40वें अध्याय के तीसरे मन्त्र में कहा गया है-

असुर्या नाम ते लोका अन्धेन तमसावृता।
तांस्ते प्रेत्यापि गच्छन्ति ये के चात्महनो जना:।।

अर्थात् जो कोई आत्मघाती लोग हैं, अन्त:करण को मलिन करने वाले हैं, वे मरकर उन लोकों में, योनियों में जाते हैं जो असुरों के लोक कहलाते हैं, और वे घने अंधरे से ढ़के हुए हैं अर्थात् ज्ञानररहित मूढ़ नीच योनियाँ हैं।

शरीर और मन की अपेक्षा आत्मा श्रेष्ठ है, क्योंकि शरीर व मन आत्मा के साधन हैं और मनुष्य को उसके कल्याण के लिए दिये गये हैं। इसलिए हिंसक व्यक्ति अधिक दया का पात्र है। उसके प्रति भी द्वेष या बदले की भावना रखना एक प्रकार की हिंसा ही है। अत: जिस पर हिंसा की जाती है उसके, तथा हिंसक दोनों के कल्याण के लिए हिंसा रूपी पाप को हटाना चाहिए। योगी के हिंसाव्रत की सिद्धि से आत्मिक तेज इतना बढ़ जाता है कि उसके सानिध्य से हिंसक भी हिंसा की भावना को त्याग देता है। मानसिक शक्ति वाले मानसिक बल से हिंसा को हटाने का प्रयत्न करें, वाणी व शारीरिक शक्ति वाले जहाँ तक उनका अधिकार है, हिंसा रोकने का प्रयास करें। शासकों तथा न्यायाधीशों का यह परम कर्तव्य है कि वे अहिंसा व्रत की स्थापना करें। जिस प्रकार कोई मनुष्य पागल होकर किसी घातक हथियार से अपने शरीर या दूसरों पर हिंसा रुपी आघात करता है और किसी प्रकार से उसकी रक्षा या सुधार सज़्भव नहीं है, तब शासकों का यह कर्त्तव्य है कि उसके शरीर से आत्मा का वियोग कर दें। यह कार्य अहिंसाव्रत में बाधक नहीं है, बल्कि अहिंसाव्रत का रक्षक है, पोषक है। यदि यह कार्य द्वेषादि भावना से प्रेरित होकर किया जाता है तब यह हिंसा की कोटि में आ जाता है।

अपनी दुर्बलता व कायरता के कारण भयभीत होकर जो अत्याचार सहन करता है और अपनी धन-सज़्पत्ति को चोर-डाकुओं से लुटवाता है, अपने सामने परिवार, देश, समाज व धर्म को अपमानित होते देखता है, तब यह कार्य अहिंसा नहीं है, बल्कि हिंसा का पोषक और कायरता रूपी महापाप है। दुर्बल, डरपोक, कायर व्यक्ति हिंसा बढ़ाने में भागीदार व सहायक होता है। जो व्यक्ति मृत्यु के भय से अपनी धन-सज़्पत्ति बिना विरोध किये आसानी से दे देते हैं, वे उन चोर-डाकूओं के दूसरे स्थानों पर डाका डालने और लूटपाट करने में सहायक बनकर पाप के भागीदार बनते हैं। सच्चे वीर पुरुष मृत्युभय से रहित, आत्मबल व संगठन शक्ति से निर्भयतापूर्वक उन चोर-डाकुओं का सामना करते हैं और अपने प्राणों को खोकर भी लुटेरों के दु:साहस को कम करते हैं। यदि वे जीवित रहते हैं तो अपनी धन-सज़्पत्ति का भोग करते हैं और यदि बलिदान होते हैं तो स्वर्ग को प्राप्त करते हैं। भारत के क्षत्रियों में यह प्रथा रही है कि जब वे अत्याचारी विधर्मियों से युद्ध में अपने धर्म व देश को बचाने की कोई आशा नहीं देखते थे, तब उनके बच्चे व स्त्रियाँ आग की चिता में अपने आप को आहूत कर देते थे और वे वीर क्षत्रिय हाथों में तलवारें लेकर सैंकड़ों शत्रुओं को मौत के घाट उतारकर देश व धर्म पर बलिदान हो जाते थे।

सर्वसाधारण के लिए अहिंसा रूपी व्रत के पालन के लिए सबसे सरल कसौटी यह है कि दूसरों के साथ ऐसा व्यवहार करना चाहिए जैसे व्यवहार की आप दूसरों से अपेक्षा रखते हैं। हर समय यह ध्यान रखना चाहिए कि हमारा जीवन प्राणिमात्र के लिए सुखदायी और कल्याणकारी

हो। कोई कार्य ऐसा न होने पाये जिससे किसी को किसी प्रकार का कष्ट पहुँचे। हिंसा के सज़्बन्ध में इस बात का ध्यान रखना चाहिए कि किसका जीवन कितना मनुष्य समाज के लिए उपयोगी या हानिकारक है। क्योंकि मनुष्य जीवन में ही आत्मोन्नति की जा सकती है अर्थात् खटमल, जूं, मच्छर, मक्खी, पिस्सू आदि हिंसक जन्तुओं की अपेक्षा साधारण कीट, पतंग आदि की हिंसा अधिक बड़ी है। उनकी अपेक्षा साधारण जानवरों की, साधारण जानवरों की अपेक्षा उपयोगी पशुओं की, उपयोगी पशुओं की अपेक्षा मनुष्यों, साधारण मनुष्यों की अपेक्षा उन उच्च-कोटि के मनुष्यों की, जिनका जीवन पवित्र और उत्कृष्ट है, जिनसे देश, समाज और प्राणिमात्र को अत्यंत लाभ पहुँचता है।

शास्त्रों में सत्य को अहिंसा का ही रूपान्तर कहा गया है। सत्य का व्यवहार केवल वाणी से नहीं होता है, जैसा कि साधारणतया समझा जाता है। कई अविवेकी मनुष्य दूसरों के हृदय को पीड़ा पहुँचाने वाले वचन कहने में अपने को सत्यवादी होने का दज़्भ करते हैं। इस सज़्बन्ध में महाभारत की एक घटना है- पांडवों द्वारा श्रीकृष्ण की सहायता से राजसूय यज्ञ की समाप्ति पर मय द्वारा निर्मित मायावी सभा भवन में, जल के स्थान पर थल और थल के स्थान पर जल तथा दीवार की जगह दरवाजा और दरवाजे के स्थान पर दीवार समझते हुए दुर्योधन को स्थान-2 पर ठोकर खाते देख द्रोपदी ने उपहास में यह वाक्य कह दिया कि **'हे महाराज धृतराष्ट्र (अन्धे) के पुत्र! देखो द्वार इधर है।'** इस वाक्य में छिपे हुए अर्थ से उसके दिल को चोट पहुँचाने वाले भाव थे कि **'अन्धों के पुत्र अन्धे ही होते हैं,'** यह हिंसा रूपी सत्य था, जिसका परिणाम अन्ततः महाभारत का विनाशकारी युद्ध हुआ, जिससे भारत का सर्वथा पतन हुआ।

महाभारत की एक ओर घटना है। एक समय युद्ध में कर्ण से परास्त होने के पश्चात् युधिष्ठिर ने अर्जुन को कर्ण-वध के लिए उत्तेजित करने के उद्देश्य से गाण्डीव धनुष को धिक्कारते हुए कहा कि 'हे अर्जुन! तेरे अपने गाण्डीव धनुष, बाहुवीर्य, पवनसुत-अंकित पताका व अग्निप्रदत्त रथ को बार-बार धिक्कार है। तुम अपने गाण्डीव धनुष को तुमसे बलवान होने का दावा करने वाले उस मित्र राजा को सौंप दो।' अर्जुन ने यह प्रतिज्ञा की हुई थी कि जो उसको धिक्कार कर यह कहेगा कि तुम अपने गाण्डीव धनुष को किसी दूसरे को दे दो, क्योंकि वह तुमसे अधिक बलवान है, उसको वह मार डालेगा। इसलिए उसने अपनी प्रतिज्ञा का पालन करते हुए युधिष्ठिर के वध हेतु अपनी तलवार खींच ली। उस समय श्रीकृष्ण ने अर्जुन को समझाते हुए इस प्रकार कहा कि 'हे अर्जुन! अज्ञानी केवल शब्द के स्थूल रूप को देखते हैं। परन्तु ज्ञानी उसके सूक्ष्म अर्थ को देखते हैं और उसके ही अनुसार व्यवहार करते हैं। तेरी प्रतिज्ञा केवल गाण्डीव धनुष

अर्थहीन आघात

❑डॉ० महाश्वेता चतुर्वेदी
-२४-आंचल कालोनी, श्यामगंज, बरेली-२४३००५

यदि पर्वत सा अटल रहे तो
अर्थहीन होंगे आघात।।

फूलों की कर रहे अपेक्षा
शूलों को बाँटा करते।
मानवता की सुन कराह भी,
व्यथा-वेदना कब हरते?
कर न अपेक्षायें ऐसों से
दीप बुझा कर देते रात।

कोई करता रहे भलाई,
दुर्जन को आता कब ध्यान।
औरो के छिद्रों पर प्रतिपल,
देते रहते अपने कान।
क्षमादान पाने पर भी
कब रुकते हैं इनके उत्पात।

ब्रह्मा भी आ जाये भू-पर
ये न सुनेंगे उसकी बात।
अवसर से पहचान कहाँ है,
ठुकराते रहते शुभ-प्रात।

प्रतिबंधित कर रहे आगमन,
स्वप्नशेष हैं जो मधुस्नात।

को धिक्कारने वाले का वध करने की थी और धिक्कारना अपमान के लिए द्वेषभाव से होता है। परन्तु युधिष्ठिर ने गाण्डीव धनुष की प्रंशसा और मान बढ़ाने के लिए प्रेमभाव से तुझे उत्तेजित करके कर्ण का वध करने के लिए ये शब्द कहे हैं। इसलिए युधिष्ठिर के शब्दों के यह अर्थ नहीं लिए जा सकते और उसका मारना अनुचित है।

फिर भी यदि तू अज्ञानियों के समान रुढ़िवाद में ही पड़ना चाहता है तो मारना केवल शास्त्रों से और स्थूल शरीर का ही नहीं होता। युधिष्ठिर ज्ञानी है, शरीर उसके लिए वस्त्र के तुल्य है, उसके शरीर का पृथक् होना उसके लिए मृत्यु नहीं है। वाणी की चोट शस्त्र से अधिक तीक्ष्ण होती है, वही उसके लिए मृत्यु के तुल्य है, उसी से मारो उसको। अर्जुन तुम धर्म के तत्त्व को जाने बिना धर्म की रक्षा करना चाहते हो, परन्तु प्राणियों का वध कब करना चाहिए, यह नहीं जानते। मेरे विचार से प्राणियों को न मारना ही सबसे श्रेष्ठ है, चाहे झूठ बोल दे परन्तु हिंसा कभी न करें। तुम एक अज्ञानी मनुष्य की तरह धर्म-तत्त्व के ज्ञाता राजा और बड़े भाई को किस प्रकार मार सकते हो ? हे अर्जुन ! जो युद्ध नहीं कर रहा, जो शत्रु नहीं है, जो युद्ध से भाग रहा है, जो शरण में आ गया है, जो हाथ जोड़े सामने खड़ा है और जिसकी बुद्धि ठिकाने नहीं है, विद्वान् लोग इनके वध को उचित नहीं मानते। यह सब कुछ तुम्हारे पूज्य भाई युधिष्ठिर में विद्यमान हैं। तुमने पहले जो प्रतिज्ञा की थी, वह बच्चों जैसी थी और उस अपनी मूर्खता के कारण अधर्मयुक्त कार्य करने का निश्चय कर रहे हो।

प्राणियों की रक्षा के लिए धर्म का उपदेश किया गया है। जो अहिंसायुक्त है, वही धर्म है, यह तुम निश्चित समझो। धर्म का उपदेश तो हिंसकों को भी अहिंसा के लिए किया गया है। धर्म प्रजा को धारण करता है अर्थात् व्यवस्था में रखता है और धारण करने से ही उसे धर्म कहते हैं। मैं तुम्हारा हितैषी हूँ, आज मैंने यह धर्म का लक्षण और उद्देश्य बुद्धिपूर्वक विधिसहित तुम्हें बता दिया है। क्या अब भी युधिष्ठिर वध के योग्य है ? यह स्वयं तुम निश्चित करो। भ्राता युधिष्ठिर युद्ध में कर्ण के तेज बाणों से घायल होकर, दु:खी व शिथिल हो गये हैं। इसलिए ये अयुक्त वचन उसने तुमसे कह दिये। युधिष्ठिर ने ऐसा इसलिए कहा कि यदि अर्जुन उत्तेजित नहीं होगा तो युद्ध में कर्ण को नहीं मार सकेगा। उनका अभिप्राय: तुम्हारा या गाण्डीव का अपमान करना नहीं था, अपितु तुम्हें उत्साहित करके कर्ण का वध कराना है, अत: धर्मपुत्र वध के योग्य नहीं है। तुम्हें अपनी प्रतिज्ञा के पालन हेतु ऐसा व्यवहार करना चाहिए, जिस बात से वह जीते जी मृत के समान हो जाये। माननीय पुरुष जब तक मान पाते हैं, तब तक वे संसार में जीवित हैं और जब उनका अपमान होता है तब वे जीते जी मरे के समान हैं। इसलिए हे अर्जुन ! तुम यही व्यवहार युधिष्ठिर के साथ करो और इनके अपमान के लिए तुम्हारा इतना व्यवहार ही पर्याप्त है, कि तुम उन्हें '**तू**' कहकर सम्बोधित करो, यह उनका बिना वध के ही वध है। यदि युधिष्ठिर इस प्रकार 'तू' कहने को अनुचित समझ ले, तब तुम इनके चरणों में अभिवादन करके उनसे क्षमा मांग लेना। तब धर्मराज युधिष्ठिर तुम पर कोप कभी नहीं करेंगे। तब हे पार्थ ! तुम झूठ और भ्रातृ-वध के पाप से पृथक् होकर प्रसन्नतापूर्वक सूतपुत्र कर्ण को मार लेना।

शास्त्रों के अनुसार निरपराधी जीवों की हिंसा को रोकना सबसे बड़ा सत्य है। कल्पना करो कि कुछ लोग डाकुओं से बचने के लिए हमारे सामने किसी गुप्त स्थान में छिप जाते हैं और कुछ समय पश्चात् डाकू आकर तुमसे यह पूछें कि वे आदमी कहाँ गये हैं ? उस समय धैर्य धारण करते हुए हमारा कर्त्तव्य होगा कि अपने सामर्थ्य के अनुसार हिंसा को रोकना और निरपराध व्यक्तियों की सहायता करना। हिंसक व्यक्तियों को अपनी संकल्प शक्ति व आत्मबल से मानसिक प्रेरणा देकर उनकी हिंसावृत्ति को त्यागने को प्रेरित किया जाये। चतुरवक्ता अपनी वाणी व वाक्शक्ति से उन्हें पाप से बचने का उपदेश करे। शस्त्र विद्या में कुशल योद्धा अपने शारीरिक बल से उनकी हिंसा हटाने का प्रयत्न करे। यदि किसी में उपर्युक्त कोई भी सामर्थ्य नहीं है और अपनी मृत्यु से भी डरता है तो ऐसी परिस्थति में भगवान् मनु, योगीश्वर श्रीकृष्ण व नीति शास्त्र इस प्रकार व्यवस्था देते हैं कि जब तक कोई प्रश्न न करे, तब तक कुछ नहीं बोलना चाहिए और यदि हिंसक अन्याय व बल से पूछे तो भी उत्तर नहीं देना चाहिए या जानते हुए भी पागल के समान हाँ हूँ या ना नू कर देना चाहिए। यदि बोलना आवश्यक हो जाये या न बोलने से शक हो तो वहाँ झूठ बोलने में ही श्रेय है और यह बिना विचारे सत्य ही है।

सत्य बोलना अच्छा है, परन्तु सत्य से अधिक ऐसा बोलना अच्छा है, जिससे सब प्राणियों का हित हो, मंगल हो। क्योंकि जिससे सब प्राणियों का वास्तविक हित होता है, वह हमारे मत में सत्य है और अहिंसा तीनों कालों में सत्य है। इति ओम् शम्।

स्वस्थ्य-चर्चा

लस्सी में गुण बहुत हैं।

❒डॉ॰ मनोहर दास अग्रावत,
एन॰डी॰ 'आयुर्वेद शिरोमणि'
विद्यावाचस्पति (प्राकृतिक चिकित्सक)

मट्ठा त्रिदोष नाशक है। अपने खट्टेपन के कारण वायु का, मधुरता से पित्त का एवं कसैलेपन से कफ का नाश करता है। त्रिदोषों को शमन करने की प्रबल शक्ति से पूर्ण आयुर्वेद शास्त्र ने तक्र को ही माना है।

शरीर के प्रत्येक अंग-प्रत्यंग से विजातीय तत्त्वों को बाहर निकाल कर नवजीवन प्रदान करने वाली तथा रोग प्रतिरोधक शक्ति शरीर में एकत्र कर सुदृढ़ स्वास्थ्य एवं दीर्घायु का उपहार देने वाली वस्तु को 'अमृत' के अतिरिक्त भी कोई संज्ञा दी जा सकती है? इस विषय में दो मत होने की संभावना नहीं। इस रहस्यमय एवं अमृत तुल्य वस्तु का नाम है 'मट्ठा' (छाछ) जिससे सभी परिचित हैं।

भारतीय ग्रामों में अतिथि का स्वागत प्रायः मट्ठे से करने की एक प्राचीन स्वस्थ परम्परा चली आ रही है। इस प्रथा के विषय में एक भ्रान्त धारणा ऐसी भी बनी हुई है कि गांव में मट्ठा ही सबसे सस्ता और सर्वत्र सुलभ वस्तु है, अतः सत्कार इसी से किया जाता है। इस का कारण वास्तव में यह है कि किसान मट्ठे के सन्मुख-अमृत को भी तुच्छ समझता है। नगरों में अतिथि का आगमन आज के आधुनिक कहे जाने वाले युग में भले ही 'ग्रहों' का प्रकोप कहा जाता हो, परन्तु ग्रामों में आज भी अतिथि को 'भगवान' का ही रूप' माना जाता है और इसी भावना के अनुरूप अतिथि सत्कार 'मट्ठे' से ही होता है।

मट्ठे का सेवन करने वाला-कभी रोगी नहीं होता और मट्ठे से नष्ट हुए रोग फिर कभी नहीं हो पाते।

पाश्चात्य जगत् की दृष्टि में मट्ठा---

हंगरी देश के कतिपय विद्वानों ने अनेक प्रकार से अनुसंधान कर यह घोषित किया कि मनुष्य की आंतों के भीतर रहने वाले विशेष प्रकार के जन्तुओं को समूल नष्ट कर डालने में मट्ठा असीम उपयोगी सिद्ध हुआ है। साथ ही सग्रंहणी के समान आंत्र व्याधियों पर अपूर्व लाभप्रद है।

हंगरी के चिकित्सक समुदाय द्वारा यह घोषित किये जाने पर अन्य पाश्चात्य चिकित्सकों ने भी इसका अनुभव किया। परिणामतः भारत की इस प्राचीन वस्तु को आधुनिक चिकित्सा-विज्ञान ने भी अपना लिया, जबकि इससे पूर्व पश्चिमी संसार इसे व्यर्थ की वस्तु मानता था।

प्रोफैसर 'मैनली काफ' तथा 'ड्यूकल' जैसे सुविख्यात जन्तुशास्त्र विशेषज्ञों का कथन है कि तक्र (मट्ठे) में एक विशेष प्रकार के जन्तु होते हैं जिन्हें 'लेक्टिक' जन्तु कहा जाता है। ये मानव शरीर के लिए अत्यंत ही उपयोगी होते हैं। इनसे शरीर में रोग प्रतिरोधक शक्ति की वृद्धि होती है। शरीर में स्थित अनेक प्रकार के रोगोत्पादक कीटाणुओं का नाश हो जाता है जिससे मनुष्य स्वस्थ एवं दीर्घजीवी होता है। अनेक दीर्घायु पाने वाले व्यक्तियों के विषय में यह देखा गया है कि उनका आहार सात्विक एवं मट्ठाप्रधान रहता है।

आयुर्वेदीय मतानुसार---

मट्ठा स्वादिष्ट, कसेला, खट्ठा, पचने में स्वादिष्ट, हल्का, उष्णवीर्य, अग्निदीपक, हितकारी, मधुर तथा संग्रहणी, वातशूल, आमातिसार, हैजा, वायु से हुआ ज्वर, पीलिया, प्रमेह, वायु गोला, उदर विकार, बवासीर, भोजन के पश्चात् की उदर पीड़ा, उल्टी, प्यास, अरूचि, सूजन, चर्बी बढ़ना, विष विकार, कफ, वात, मूत्र विकार, ज्वर एवं तेल या घृतजन्य अजीर्ण को नष्ट करने के गुण रखता है।

मट्ठा त्रिदोष नाशक है। अपने खट्टेपन के कारण वायु का, मधुरता से पित्त का एवं कसैलेपन से कफ का नाश करता है। त्रिदोषों को शमन करने की प्रबल शक्ति से पूर्ण आयुर्वेद शास्त्र ने तक्र को ही माना है।

मट्ठे के विभिन्न प्रकार---

'तक्र तीन प्रकार का होता है।'-महर्षि आत्रेय

प्रथम-घृतहीन-जिसमें से घृत पूर्णरूप से निकाल लिया गया हो, यह-हल्का, सुपथ्य एवं त्रिदोषनाशक होता है।

द्वितीय-अल्पघृत युक्त-जिसमें से घृत पूर्णरूप से नहीं निकालकर कुछ छोड़ दिया गया हो, यह सुपाच्य, शक्ति वर्द्धक, तृप्तिदायक और बवासीर में लाभदायक होता है।

तृतीय-घृतयुक्त-जिसमें बिल्कुल घी न निकाला गया हो ऐसा तक्र-गाढ़ा, भारी, कफ उत्पन्न करने वाला, क्षीण-मनुष्यों के लिये बलप्रदायक, ऑव, सूजन और अतिसार को नष्ट करता है।

आयुर्वेदशास्त्र मट्ठे को पाँच प्रकार का मानता है, यथा-घोल, मथित, तक्र, उदश्वित और छच्छिका।

(१) **घोल**–जो मट्ठा मलाई सहित दही से मथा गया हो तथा उसमें जल न डाला गया हो–'घोल' कहलाता है।
गुण–वात, पित्त नाशक प्रभाव रखता है।
(२) **मथित**–दही में से मलाई निकाल ली गई हो, परन्तु जल न डाला गया हो, मथने पर 'मथित' माना जाता है।
गुण–कफ, पित्त नाशक।
(३) **तक्र**–जिसमें एक भाग जल और तीन भाग दही (मलाई रहित) डालकर मथा गया हो 'तक्र' कहलाता है।
गुण–मलावरोधक, कसैला, खट्टा, पचने पर स्वादिष्ट, हल्का, उष्णवीर्य, अग्निदीपक, वीर्यवर्द्धक, तृप्तिदायक, वातनाशक तथा संग्रहणी, अतिसार आदि रोगों में अमृत तुल्य प्रभाव दिखाता है। तक्र हल्का होने से पित्त को कुपित नहीं करता। साथ ही अम्ल, उष्ण, दीपन, वृष्यवातनाशक, कसैला और रुक्ष होने से कफ का नाश करता है।
(४) **उदश्वित**–मलाई रहित आधा दही और आधा जल मिलाकर बनाए जाने पर 'उदश्वित' की श्रेणी में आता है।
गुण–कफकारक, बलवर्द्धक एवं थकान दूर करने का प्रभाव रखता है।
(५) **छच्छिका**–एक भाग मलाई रहित दही एवं तीन भाग जल डालकर मथने पर 'छच्छिका' कहाती है।
गुण–शीतल, हल्की, पित्त नाशक, श्रम हरने वाली, प्यास को शांत कर स्फूर्ति प्रदान करने वाली तथा लवण के साथ वात, कफ नाशक और जठराग्नि को प्रदीप्त कर भोज्य पदार्थों को भली प्रकार पचाने का गुण रखती है।

दुग्धभेदानुसार अन्तर---

मट्ठे के गुणधर्म में पशुओं के दुग्ध भेदानुसार भी अन्तर किया जाता है। यथा:–

(१) **गाय के दूध का तक्र**–त्रिदोषों को शमन करने वाला, सर्वोत्तम पथ्य, अग्निदीपक, रूचि प्रदायक, बलवुद्धिवर्द्धक तथा बवासीर और समस्त उदर विकारों को शांत कर शरीर को पूर्ण आरोग्य रखने में एक विश्वसनीय मित्र का कार्य करता है। आबाल वृद्ध सभी के लिए एक **उत्तमटॉनिक** है। नित्य सेवन करने से उत्तम स्वास्थ्य के साथ-साथ लम्बी आयु प्राप्त होती है और वृद्धावस्था में भी शरीर विकार रहित रहता है।
(२) **भैंस के दूध से बनाया गया तक्र**–कफ उत्पन्न करने वाला, गाढ़ा, शोथकारक तथा तिल्ली, संग्रहणी एवं अतिसार (दस्त) में लाभकारी है।
(३) **बकरी के दूध का तक्र**–स्निग्ध, हल्का, त्रिदोष निवारक तथा बवासीर, वायुगोला, संग्रहणी, दर्द एवं पीलिया रोग में अत्यन्त गुणकारी।
(४) **भेड़ के दूध का तक्र**–दुर्गन्धयुक्त, खट्टा, कुपथ्य, दीपन, चरपरा, उष्ण, हल्का, पित्त उत्पन्न करने वाला तथा रक्त विकारों का जन्मदाता होता है। वायु का शमन करने में उत्तम है।
विशेष–औषधि के रूप में तक्र का सेवन करने पर यह अन्तर अवश्य ध्यान में रखना चाहिये।

मानव शरीर पर तक्र का प्रभाव–

शरीर के भीतर रक्त वाहिनी शिराओं में धीरे-धीरे अनेक प्रकार के क्षारीय द्रव्य एकत्र होते रहते हैं। फलस्वरूप रक्तवाहिनी शिराएँ रक्त का संचालन बराबर सुव्यवस्थित रूप से नहीं कर पातीं। रक्त का संचालन पूर्ण रूप से न होने से शरीर का पोषण, विकास उचित रूप में नहीं हो पाता। इसका परिणाम? मनुष्य युवा काल में ही वृद्ध सरीखा प्रतीत होने लगता है। केशों का असमय ही श्वेत होना, मुख पर झुर्रियाँ, यौवन जनित स्फूर्ति का नितान्त अभाव, यह लक्षण स्पष्ट हो जाते हैं और मनुष्य को जीवन सारहीन लगने लगता है। जब इस क्षार की शरीर में पर्याप्त मात्रा बढ़ जाती है, तब यह अस्थियों के सँधि स्थान में एकत्र होने लगता है। परिणामस्वरूप सँधिवात और गठिया जैसी महाव्याधियों का जन्म होता है।

इस विषय में तक्र का कार्य रक्तवाहिनी शिराओं पर सीधा प्रहार करना होता है। इन असंख्य शिराओं एवं शरीर के सँधि स्थानों में एकत्र क्षारीय तत्व को मट्ठा मल मार्ग द्वारा सरलता से बाहर निकाल देता है।

मट्ठे का प्रभाव मूत्रपिंड पर भी होता है और इसके सेवन करने वाले व्यक्ति को मूत्र विशेष खुलकर आता है। नियमित मट्ठे का सेवन करने से रक्तवाहिनी नसों में जमा हुआ क्षार शरीर से बाहर निकलता रहता है और कालान्तर में पुनः कभी जमने नहीं पाता। इस सबका का शुभ परिणाम यह होता है कि मनुष्य पर असमय में ही वृद्धावस्था का आक्रमण नहीं होने पाता। मूत्र का पीलापन आदि नष्ट हो जाता है और इसकी मात्रा किंचित् बढ़ जाती है। आमाशय सदैव निर्मल रहने के कारण भोजन में रूचि उत्पन्न होती है। भूख खुलकर लगती है और खाया-पिया उचित रूप में पचकर शरीर में पुष्टता प्रदान करता है। पाचन क्रिया ठीक होने से शौचादि नित्य क्रियाएँ व्यवस्थित रूप से चलती हैं और रस, रक्त इत्यादि धातुएँ शरीर में उचित परिणाम में तथा शुद्ध बनती रहती हैं।

तक्र सेवन करने वाले व्यक्ति से अनिद्रा कोसों दूर रहती है। गंभीर निद्रा और उठने के पश्चात् नवीन स्फूर्ति, उत्साह, उमंग प्रदान करना मट्ठे का प्रधान कार्य है।

''तक्र सेवी कभी रोगी नहीं होता।'' –आयुर्वेद

–मनोहर आश्रम, स्थान–उम्मैदपुरा, पो० तारापुर (जावद, म०प्र०) –४५८३३० जिला नीमच (म० प्र०)

जानते हो?

❒आदित्य आर्य

❍'मैं एथेंस अथवा यूनान का नागरिक नहीं हूँ, मैं पूरे विश्व का आदमी हूँ' ये शब्द सुकरात ने कहे थे।

❍वह कौन सी संख्या है, जिसमें ६ जोड़ने या जिसे ६ से गुणा करने पर एक ही परिणाम प्राप्त होता है? (1.2)

❍यदि किसी वस्तु से जरा सी भी रोशनी परावर्तित न हो तो उस वस्तु का रंग क्या होगा? (काला)

❍महाभारत के रचयिता महर्षि वेदव्यास के माता पिता का नाम क्या था? (सत्यवती, पाराशर)

❍परमाणु का विभाजन करने वाला पहला वैज्ञानिक था- अर्वेस्ट रदरफोर्ड

❍गरुड़ किस देश की एयरलाइन का नाम है? -इण्डोनेशिया

❍किस नगर को पहले गंगाद्वार के नाम से जाना जाता था? -हरद्वार

❍वह क्या है, जिसका जन्म पानी से होता है और वह पानी के स्पर्श से मर जाता है।-नमक

हास्यम्

: प्रतीक सोनी, मानव

☞बच्चा-(पिता से) पिता जी, माऊंट एवरेस्ट कहाँ है?
पिता-(गुस्से में) 'अपनी माँ से पूछो-वह हर चीज इधर-उधर रख देती है।'

☞एक कंजूस अपने खेत में जा रहा था। अचानक उसके पैर में काँटा चुभ गया। वह बड़ी बहादुरी से काँटा निकालते हुए बोला-भगवान तेरा लाख-लाख शुक्र है कि मैं जूते पहनकर नहीं आया-नहीं तो अच्छे भले जूते में सुराख हो जाता।

☞बेटा- (माँ से) माँ मैं अपने मित्र के जन्म दिवस पर क्या उपहार दूँ?
माँ- बेटा घड़ी दे दो।
बेटा- लेकिन यह तो बहुत छोटा उपहार है।
माँ- तो फिर घड़ा दे दो।

☞नरेन्द्र -(डाक्टर से) जी, मेरे दायें पैर में दर्द हो रहा है।
डाक्टर- कोई बात नहीं, उम्र के हिसाब से ऐसा होता है।
नरेन्द्र- लेकिन डाक्टर, मेरे दोनों पैरों की उम्र तो एक ही है।

☞डाक्टर (अनु से) क्या चोट बाजू के पास लगी है?
अनु- जी नहीं, स्कूल के पास।

☞पर्यटक (होटल मैनेजर से) यहाँ के बरतन बहुत बड़े हैं।
मैनेजर-हाँ, ताकि लोग इन्हें जेब में डालकर न ले जा सकें।

☞राकेश (दीपक से) तुम इस समय मुझसे कुश्ती क्यों नहीं लड़ सकते?
दीपक-क्योंकि कल ही मैंने चार दाँत नये लगवाए हैं।

बाल वाटिका

प्रहेलिका:

❒आस्था आर्या

दो पांव और दो सिर
ऐसा प्राणी रहे हर घर
जो कोई उसके बीच में आये
कट कट कट कटता जाये। — कैंची

काटते हैं, पीसते हैं बांटते हैं, पर खाते नहीं। — ताश के पत्ते

अंत कटे तो बनूं मैं थैला,
आदि कटे तो बनूं बंदूक
सब्जी बनती मेरी खूब
अब तू मेरा नाम तो बूझ। — बैंगन

बिना खाल का एक जानवर
जिस के मुंह पर बाल,
रंगों का वह भोजन करता,
नीला, पीला, लाल। — ब्रश

जब भी आऊँ तुम्हें सताऊँ,
उड़ जाऊँ ना पकड़ में आऊँ — धुवां

धूप लगे पैदा हो जाता,
छांव लगे तो कुम्हला जाता।
बिना हवा बेहाल बना दे,
हवा लगे तो यह मर जाता। — पसीना

विचार कणिका:

❒उपासना

●प्रयास और अवसर के समावेश का नाम ही भाग्य है।

●धैर्यवान् व्यक्ति के क्रोध से हमेशा बचकर रहो।

●पुस्तक वे तितलियाँ हैं जो ज्ञान के पराग कणों को एक मस्तिष्क से दूसरे मस्तिष्क तक ले जाती हैं।

●जब आपके पास बोलने के लिए कुछ नहीं है, तो कृपया कुछ न बोलें।

●पढ़ना और विचार न करना फिजूल है, परन्तु नहीं पढ़ना और विचार करना खतरनाक है।

●स्वयं को ईमानदार बनाएँ, तभी आप सुनिश्चित कर सकेंगे कि दुनिया से कम से कम एक बेईमान कम हुआ है।

●भाग्योदय भरपूर अवसर मिलने से नहीं, बल्कि मिले हुए अवसरों का भरपूर लाभ उठाने से होता है।

●सफलता और आराम कभी भी एक साथ नहीं रह सकते।

उन्होंने सत्य और अहिंसा को अपने आचरण में उतारा था

जयपुर से भिड़ो जाकर - कर्णवास में स्वामीजी सभा में बोल रहे थे कि बरौली के राव कर्णसिंह आकर गालियाँ देते हुए तलवार घुमाने लगे। इस पर स्वामी जी ने कहा कि यदि शास्त्रार्थ करना है तो अपने गुरु रंगाचार्य को बुला लो, यदि शास्त्रार्थ करना है तो जयपुर, जोधपुर से जाकर भिड़ो। इस पर भी वह नहीं माना और स्वामी जी पर आक्रमण कर दिया तो स्वामी जी ने उसकी तलवार छीनकर उसके दो टुकड़े कर दिये।

मेरे रक्षक परमात्मा हैं :- फर्रुखाबाद में कुछ गुण्डे स्वामीजी को हानि पहुंचाने के लिए आए किन्तु चेहरे का तेज देखकर भाग गए। जब स्वामीजी को सुरक्षा के लिए अन्दर रहने को कहा गया तो उत्तर मिला- मेरी रक्षा तो सर्वत्र परमात्मा ही करते हैं। यहीं पर स्वामीजी के व्याख्यान में एक शराबी ने स्वामीजी पर जूता फैंका। जब लोग उसे पकड़ने लगे तो स्वामी जी ने उसे यह कहते हुए छुड़ा दिया- जूता तो हमें लगा ही नहीं। फिर यह नशे में भी है। यहीं की एक अन्य घटना में स्वामीजी को मारने आए एक लठैत ने पूछा- तुम मूर्त्ति को ईश्वर नहीं मानते? इस पर स्वामीजी ने उससे ईश्वर का रूप पूछा तो उसने निराकार ही बताया। स्वामीजी ने कहा तो इसमें मूर्त्ति कहाँ से आई। इतने से ही वह भी सत्य का पुजारी बन गया। यहीं पर एक व्यक्ति भ्रमण करते स्वामीजी को गालियाँ देने लगा। वह व्यक्ति तंग करने के लिए निवास पर ही जा पहुंचा। स्वामीजी ने हंसते हुए उसका स्वागत किया तो उसका मन बदल गया और भूल के लिए पश्चात्ताप करने लगा।

मैं तुम्हें लड्डू देता हूँ- स्वामीजी अमृतसर में व्याख्यान दे रहे थे कि एक अध्यापक के आदेश से उसके नन्हें छात्रों ने स्वामीजी पर कंकर फैंके तथा पकड़े जाने पर रोते हुए कहा- उन्हें ऐसा करने के लिए अध्यापक ने कहा था तथा लड्डू देने को कहा था। इस पर स्वामीजी ने उन्हें लड्डू देते हुए कहा- अध्यापक तो संभव है न दे सकें, लो मैं तुम्हें लड्डू दिये देता हूँ।

हमारा काम वैद्य का है- अमृतसर में ही स्वामीजी का शास्त्रार्थ तय हुआ, विरोधी बहुत देर से आए और आते ही ईंटे आदि फैंकने लगे। पुलिस के भय के कारण वे भाग तो गए परन्तु भक्तों का गुस्सा न गया। इस पर स्वामीजी ने कहा- 'हमारा काम वैद्य का है-- यही लोग कभी आप पर पुष्प वर्षा करेंगे।' यहीं कुछ लोग दुष्टों से स्वामीजी की रक्षार्थ उनके पास सोने लगे। जब स्वामीजी को पता चला कि निहंगों से रक्षार्थ ये लोग उनके पास सो रहे हैं तो स्वामीजी ने उन्हें रोकते हुए कहा- हम अकेले ही रहेंगे। जिसकी आज्ञा का मैं पालन कर रहा हूँ, वही परमेश्वर मेरा रक्षक है।

ईंटें मेरे लिए पुष्प हैं- सूरत में स्वामीजी के व्याख्यान में एक व्यक्ति ने प्रश्न किये, किन्तु स्वामीजी के सामने न टिक पाने पर उसके साथियों ने स्वामीजी पर पत्थरों की वर्षा प्रारम्भ कर दी। भक्तों द्वारा स्वामीजी को व्याख्यान रोकने के आग्रह करने पर आपने कहा- अपने भाईयों द्वारा फैंके गये पत्थर मेरे लिए पुष्पों की वर्षा है।

ये तो हमारे भाई हैं- भड़ौच में स्वामीजी के व्याख्यान चल रहे थे। एक दक्षिणी पण्डित स्वामीजी को इंगित कर अपशब्द बोलने लगा तो लोग भड़क उठे। इस पर स्वामीजी ने कहा- ये तो हमारे भाई हैं। इन्हीं की कल्याण कामना करते हुए दिन बीतते हैं। यहीं की एक अन्य घटना है। पारसी से ईसाई हुए एक व्यक्ति ने स्वामीजी की उपस्थिति में अपशब्द बोलने आरम्भ किये तो लोग भड़क उठे। इस पर स्वामीजी ने कहा- आग आग से शांत नहीं होती। वैसे ही द्वेष बुद्धि उसके साथ द्वेष करने से दूर नहीं हो सकती।

जन्म से सब नीच हैं- पूना प्रवचन के समापन पर स्वामी जी की हाथी पर शोभायात्रा निकल रही थी। उपद्रवियों ने किसी का मुंह काला कर उसे दयानन्द कहते हुए गधे पर बैठा उसका जुलूस निकाला। वे उसे गालियाँ देते उस पर पत्थर आदि फैंक रहे थे। भक्तों ने जब स्वामीजी को बताया तो आपने कहा-अच्छा है, गालियों से पेट खाली हो लेगा तो अच्छे शब्द बोलेंगे। सच्चे दयानन्द को तो कालिमा नहीं लगी। हां, बनावटी का मुख काला होना ही चाहिए। कल पत्थर पूजते थे, आज पत्थर फैंकते हैं, सो मेरी बात मान ली। मैं भी तो यही कहता हूँ कि जन्म से सब नीच हैं। ब्राह्मण के पुत्र को नीच माना तो मेरे ही सिद्धान्त पर आए। मुझे तो यह बात सुनकर अत्यंत प्रसन्नता हुई है।

शाहजहांपुर के चांदापुर में शाक्त लोगों ने स्वामीजी की बलि देवी को देने का प्रयास किया। स्वामीजी ने पुजारी से तलवार छीन ली व मन्दिर से बाहर आ गए। एक बार रात्रि को कुछ साधु लोगों ने स्वामीजी की कुटिया को आग लगा दी किन्तु स्वामीजी इसमें से जीवित निकल आए। इस प्रकार की अनेक घटनाओं से पता चलता है कि स्वामीजी ने सत्य और धर्म का न केवल प्रचार किया बल्कि उन्हें अपने आचरण में भी पूर्ण रूप से उतारा था।

नकल या अकल?

प्रेरक प्रसंग

एक धोबी के पास एक गधा और एक कुत्ता था। कुत्ते का नाम शेरा था। धोबी शेरा को बहुत प्यार करना था। एक दिन धोबी काम करके बैठा, रोटी निकाली-शेरा-शेरा कहकर कुत्ते को पुकारा। शेरा ने अपना नाम सुना। वह उछलता, कूदता, कान हिलाता आया। धोबी ने प्यार किया। कुत्ता उसके पैरों में बैठ गया। कूं-कूं करके बोलने लगा। धोबी ने उसे अपने हाथ से रोटी खिलाई। दोनों बैठ गये।

गधा खेत में घास खाता हुआ यह सब देख रहा था। उसने मन में सोचा-मैं भी चलता हूँ। धोबी को प्यार करूँगा। मुझे भी धोबी प्यार करेगा। गधा खेत से भागा। उछलता, कूदता, कान हिलाता आया। गधा धोबी के सामने उछल-उछल कर लगा हैंचू-हैंचू करने। धोबी डर गया। वह उसे बाँधने के लिए रस्सी उठाने लगा। गधा समझा-धोबी उसे प्यार करेगा। गधा और उछला, अपने अगले दोनों पैर उसकी छाती पर रख दिये, जीभ से उसके कान चाटने लगा। धोबी डर कर गिर गया। अब गधा उसका मुँह चाटता और प्यार से हैंचू-हैंचू करता। जैसे तैसे धोबी उठा। घर की ओर दौड़ा। एक मोटी सी लाठी लाया। लाठी से गधे को बहुत मारा।

अब गधा समझ गया, बिना समझे किसी की नकल करना कितना बुरा है!

-प्रतीक मानव

बुरों से क्या सीखा?

एक हकीम साहब अपनी दवाओं के साथ साथ शिक्षाओं के लिए भी प्रसिद्ध थे। वे जितने कुशल वैद्य थे उतने ही उदार भी थे। एक बार एक परिचित ने उनसे पूछा- हकीम साहब, मैं यह जानना चाहता हूँ कि आपने इतनी शिष्टता, सभ्यता कहाँ से सीखी?

'अशिष्ट और असभ्य लोगों से।' हकीम साहब ने जवाब दिया। हकीम साहब का जवाब कुछ अधिक गहरा था। परिचित व्यक्ति इसे समझ न पाया। वह बोला- यह कैसे हो सकता है? अशिष्ट और असभ्य लोग भला औरों को क्या सिखा सकते हैं?

'सच पूछो तो यह तुम्हारी नासमझी है। मैंने तो असभ्य और अशिष्ट लोगों से ही यह शिक्षा ली है। उनकी जो बातें मुझे बुरी लगीं, उन्हें मैंने तुरन्त त्याग दिया। सोचो जो बात मुझे बुरी लग सकती है, यह औरों को भी बुरी लग सकती है। उचित यही होगा कि जैसा व्यवहार तुम दूसरों से अपने लिए चाहते हो, वैसा ही तुम दूसरों के साथ करो।'

यह हकीम साहब थे जाने माने हकीम लुकमान। जिनके बारे में एक कहावत भी प्रचलित है कि शक का इलाज तो हकीम लुकमान के पास भी नहीं था।

अनिल कुमार

नये कलमकार

सावन

सावन की बहार आयी,
लेकर ढेरों खुशियाँ,
जश्न मनाओ! नाचो गाओ!!
आखिर आया है सावन।

परन्तु कहीं मनुष्य--
यानि एक किस्म का रावण,
खत्म न कर दे सावन!
काट काट कर पेडों को,
बना न दे धरती को ही पावन?

यदि हो गए सारे पेड़ धरती से लु
तो मिलेगी मौत हमको मुफ्त!
अत: पेड़ मत काटो,
और न कहलाओ रावण।
बनके राम मनाओ खुशी से सावन!
क्योंकि सावन है सबसे अच्छा त्यौहार!
जो कर देता है दु:खों के सागर से पार!!

पावन दृश्य

वाह! देख रही मैं सौंदर्य प्रकृति का!
जा रहे हैं किसान खेतों में लिए बुग्गे!
चल रही है शीतल हवा चार चाँद लगाए,
गा रहे हैं मीठे गीत सुग्गे।।
खिल गए हैं बगिया में फूल,
धूप उन पर पड़ रही।
हँस रहे हैं भंवरे उन पर,
तितलियाँ भी उड़ रहीं।।
ऊपर है आसमां, जिसमें उड़ रहे हैं हंस बतलाते हुए।
नीचे है धरती, जिसमें हैं कई कुंए।।
उधर स्त्रियाँ पानी भरतीं, ला रही हैं मटके।
न्यारे न्यारे रंग के हैं वे, लिए रंग चटके!
उधर गांव के बच्चे निकल पड़े स्कूल के लिए।
पावन है यह दृश्य कण कण में सुन्दरता लिए।।

❒**कुसुम** सुपुत्री श्री अनिल कुमार, कक्षा नवमी, डी ए वी स्कूल जींद

अमर रहो हे चन्द्रभान

चले दयानन्द ऋषि के पथ पर, गाया सदा आर्यगान।
शान्तिधर्मी के सम्पादक, अमर रहो हे चन्द्रभान।।

न्याय यही विधाता का कर्मानुसार जीव को जन्म मिला,
सन् 1930 गाँव लुहारी और तब का करनाल जिला।
पिता श्री हरज्ञानसिंह के घर इक सुन्दर फूल खिला,
माता मानकौर जी ने भी तुम्हें धर्म की घुट्टी दई पिला।।
कालखा और बाद में घरौंडा भीष्मजी से पाया ज्ञान।।
शान्तिधर्मी के सम्पादक अमर रहो हे चन्द्रभान।

द्रवित हुए पाखण्ड देख फिर कुरीतियों पर प्रहार किया,
21 जनवरी 51 को गाँव घोड़ी में जा प्रथम प्रचार किया,
दिल्ली, घरौण्डा, पानीपत, जालंधर और हिसार किया,
जीन्द के महाविद्यालय में उपदेशकों को तैयार किया।।
हरियाणा, पंजाब, हिमाचल, नेपाल और राजस्थान।।
शान्तिधर्मी के सम्पादक अमर रहो हे चन्द्रभान।

भाग लिया हिन्दी सत्याग्रह में प्रचारक बने थे खास,
किन्नर गाँव में पकड़े गये, फिर जेल काटी एक मास,
शराब बन्दी, गौरक्षा में भी इम्तिहान में हुए थे पास,
पुस्तकें पचासों रची किया सम्पादित हिन्दू इतिहास।
अनेकों आर्यसमाज बनाकर, बढ़ाया था आर्यों का मान।।
शान्तिधर्मी के सम्पादक अमर रहो हे चन्द्रभान।।

नये पुराने आर्यों में किये जाते रहे सदा पसन्द,
अनेक जगह सम्मानित हुए, रखकर ठीक-ठीक छन्द,
महामृत्युञ्जय मंत्र जाप किया, नाड़ी चलने लगी मन्द,
2014 का दिसम्बर 23, श्वास रुककर हुआ था बन्द।
परिवार भी उनके पथ पर चल बढ़ा रहा है उनकी शान।।
शान्तिधर्मी के सम्पादक अमर रहो हे चन्द्रभान।।

आनन्द प्रकाशार्य
ग्राम पोस्ट जौरासी
त. समालखा, जिला पानीपत (हरयाणा)

वैदिक पथ के पथिक चौधरी मित्रसेन आर्य की चतुर्थ पुण्यतिथि मनाई गई

पैतृक गाँव खाण्डा खेड़ी में हुआ भव्य आयोजन

विशेष संवाददाता

परममित्र मानव निर्माण संस्थान के संस्थापक स्व० चौधरी मित्रसेन आर्य की चतुर्थ पुण्यतिथि पर २७ जनवरी २०१५ को गाँव खाण्डाखेड़ी (हिसार) में भव्य प्रतिभा सम्मान समारोह का आयोजन किया गया। परममित्र मानव निर्माण संस्थान के अध्यक्ष कैप्टन रुद्रसेन सिन्धु के सान्निध्य में आयोजित समारोह में पूज्य स्वामी रामदेव जी व माननीय श्री मनोहरलाल जी, मुख्यमंत्री हरयाणा सरकार व कैप्टन अभिमन्यु जी वित्त मंत्री हरियाणा सरकार की उपस्थिति में हजारों लोगों ने चौधरी मित्रसेन आर्य के प्रति श्रद्धासुमन अर्पित किये। क्षेत्र के लगभग ६०० प्रतिभाशाली बालक और बालिकाओं को संस्थान की ओर से पुरस्कृत किया गया। विद्वानों के सम्मान की शृंखला में स्वामी धर्ममुनि जी महाराज, आत्मशुद्धि आश्रम, (बहादुरगढ़) व शांतिधर्मी के संस्थापक, सम्पादक व भजनोपदेशक पण्डित चन्द्रभानु आर्य (मरणोपरांत) को स्वामी रामदेव जी, मुख्यमंत्री जी, कैप्टन रुद्रसेन जी, कैप्टन अभिमन्यु जी वित्त मंत्री हरियाणा सरकार के कर कमलों से सम्मानित किया गया। पण्डित चन्द्रभानु आर्य की ओर से यह सम्मान उनके बड़े सुपुत्र श्री रमेशचन्द्र आर्य ने ग्रहण किया। बेटी बचाओ अभियान में विशिष्ट कार्य के लिए बहन प्रवेश आर्या व पूनम आर्या को भी विशेष रूप से सम्मानित किया गया।

स्वामी जी व मुख्यमंत्री जी ने खाण्डाखेड़ी में चौधरी मित्रसेन आर्य की स्मृति में बनने वाले हर्बल पार्क का उद्घाटन भी किया। स्वामी रामदेव जी ने नशे के दुष्प्रभावों से बचने की प्रेरणा देते हुए कहा कि नशा-मुक्त हो, योग अपनाएँ। मुख्यमंत्री जी ने हरियाणा के प्रत्येक गांव में दो एकड़ में व्यायामशाला बनवाने का संकल्प व्यक्त किया। स्वामी धर्मानन्द जी, स्वामी प्रणवानन्द जी, आचार्य बलदेव जी, स्वामी आर्यवेश जी, स्वामी चन्द्रवेश जी आदि वरिष्ठ संन्यासियों ने भी चौधरी मित्रसेन आर्य के प्रेरक व्यक्तित्त्व पर प्रकाश डाला। देश-भर से विशिष्ट सामाजिक पुरुष, माता परमेश्वरी देवी (धर्मपत्नी चौ० मित्रसेन आर्य) सहित समस्त परिवार जन, राजनेता, क्षेत्र के गणमान्य व्यक्ति उपस्थित थे।

१५ वर्ष की आयु में लिखी १८ पुस्तकें

डी ए वी स्कूल थर्मल कालोनी पानीपत के छात्र दिव्यांशु गुप्ता ने १५ वर्ष की आयु में १८ पुस्तकें लिखकर विश्व रिकार्ड बनाया है। इसके लिए दिव्यांशु का नाम गिनीज बुक ऑफ वर्ल्ड रिकार्ड में दर्ज किया गया है। उन्हें 'वर्ल्ड यंगेस्ट ऑथर' की पदवी से भी सुशोभित किया गया है। इस उपलब्धि के लिए उसे २०००० अमरीकी डॉलर का पुरस्कार मिलेगा और जब तक कोई उसका रिकार्ड न तोड़े उसे प्रतिवर्ष लगभग सवा लाख रूपये मिलेंगे। सिक्किम मनिपल वि वि व बनारस हिन्दू विवि ने उन्हें निःशुल्क अध्ययन का प्रस्ताव किया। ऑक्सफोर्ड विवि व बोस्टन विवि ने भी निःशुल्क पढ़ाई का प्रस्ताव किया है। डी ए वी के क्षेत्रीय निदेशक डॉ० धर्मदेव विद्यार्थी व प्राचार्य ने दिव्यांशु का स्वागत किया और उज्ज्वल भविष्य की शुभकामनाएँ दीं।

वेदभाष्यकार के रूप में -- पृष्ठ २० का शेष

पूजते थे। इस निष्कर्ष में सायण आदि के भाष्य उनके विचार की पुष्टि करते थे।

ऋषि दयानन्द ने इस विचार को भी ठोकर मार कर गिरा दिया। वेदों से उन्होंने सिद्ध किया कि अग्नि आदि नाम भिन्न-भिन्न देवताओं के नहीं, एक ही परमेश्वर के ये भिन्न-भिन्न नाम हैं। ऋग्वेद (१।१६४।४६) में लिखा है- एकं सद्विप्राः बहुधा वदन्ति अग्निं यमं मातरिश्वानमाहुः। 'परमात्मा एक है, उसे अनेक नामों से स्मरण किया जाता है।' इस एक मन्त्र से सारा का सारा विकासवाद कम से कम जहाँ तक वेदों का सम्बन्ध है, ढह जाता है।

तीन प्रकार के अर्थ

ऋषि दयानन्द का कहना था कि वैदिक शब्दों के तीन प्रकार के अर्थ होते हैं- आधिभौतिक, आधिदैविक तथा आध्यात्मिक। उदाहरणार्थ-इन्द्र का आधिभौतिक अर्थ अग्नि, विद्युत्, सूर्य आदि हैं; आधिदैविक अर्थ राजा, सेनापति, अध्यापक आदि दैवीय गुण वाले व्यक्ति हैं; आध्यात्मिक अर्थ जीवात्मा परमात्मा आदि हैं। इसी प्रकार अन्य शब्दों के विषय में कहा जा सकता है। इस कसौटी को सामने रखकर अगर वेदों को समझा जाये, तो न उनमें इतिहास मिलता है, न बहुदेवतावाद मिलता है, न जंगलीपन मिलता है, न विकासवाद मिलता है।

वेदों के जितने भाष्यकार हुए हैं- इस देश तथा विदेशों के, उनमें सबसे ऊँचा स्थान, ऋषि दयानन्द का है। अगर वेदों को किसी ने समझा तो ऋषि दयानन्द ने। अरविन्द घोष ने लिखा है-

''In the matter of Vedic interpretation Dayanand will be honoured as the first discoverer of the right clues. Amidst the chaos and obscurity of old ignorance and agelong misunderstanding, his was the eye of direct vision, That pierced to the truth and fastened on that which was essential.''

इस युग के महायोगी श्री अरविन्द का कहना है कि जहाँ तक वेदों का प्रश्न है, दयानन्द का सबसे पहला व्यक्ति था, जिसने वेदों के अर्थों को समझने की असली कुंजी खोज निकाली। वेदों का अर्थ समझने के लिए सदियों से जिस अंधकार में हम रास्ता टटोल रहे थे, उसमें दयानन्द की दृष्टि ही इस अंधकार को भेद कर यथार्थ सत्य पर जा पहुंची थी।

उन्नीसवीं शताब्दी में भारत में अनेक समाज सुधारक हुए। ऋषि दयानन्द, राजा राममोहनराय, केशवचन्द सेन इसी युग की उपज थे। वे सब एक तरफ हिन्दू समाज के पिछड़ेपन को देख रहे थे, दूसरी तरफ पश्चिमी देशों की प्रगतिशीलता को देख रहे थे। यह सब देखकर वे हिन्दू समाज को रूढ़ियों की दासता से मुक्त करना चाहते थे। ऋषि दयानन्द तथा दूसरों की विचारधारा में भेद यह था कि जहाँ दूसरे हिन्दू-धर्म, हिन्दू-संस्कृति तथा हिन्दुत्व को ही समाप्त करने पर तुल गये, वहाँ ऋषि दयानन्द ने हिन्दुओं को हिन्दू रखते हुए नवीनता के नये रंग में रंग दिया। कोई वृक्ष जड़ के बिना नहीं खड़ा रह सकता है। जड़ कट जाये, तो वृक्ष गिर जाता है। जड़ को मजबूत बनाकर जो वृक्ष उठता है, वही टीका रहता है।

कोई समाज अपने भूत के बिना नहीं जी सकता। भूत में पैर जमाकर भविष्य की तरफ बढ़ना। पीछे भी देखना, आगे भी देखना- यही किसी समाज के जीवन का गुर है। ऋषि दयानन्द ने इसी गुर को पकड़ा था। पीछे वेदों की तरफ देखो, उसमें जमकर आगे भविष्य की तरफ पग बढ़ाओ। भूत को छोड़ दोगे तो वृक्ष की जड़ कट जायेगी, भविष्य को नहीं देखोगे तो उठ नहीं सकोगे- यह ऋषि दयानन्द के सत्यार्थ प्रकाश का संदेश है, यही ऋषि दयानन्द के वेद भाष्य का संदेश है।

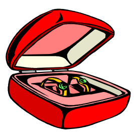
ओ३म्

M- 98968 12152

रवि 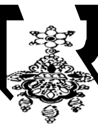 स्वर्णकार

आर्य समाज मंदिर, रेलवे रोड़,
जीन्द (हरि०)-१२६१०२

संस्कृत पर आक्षेप क्यों?-- पृष्ठ १७ का शेष

देशी भाषाओं का प्रश्न है। आरम्भ में भाषा भिन्न-२ प्रदेशस्थ मनुष्य समूहों में नहीं उपजी प्रत्युत् एक उद्‌गम स्थान से सर्वत्र फैली। वह हमारे आदि पुरुषों द्वारा एक स्थान से सर्वत्र गई। अतः संस्कृत भाषा के संकुचित रूप तथा संसारमात्र की बोलियाँ पुरातन संस्कृत का रुपान्तर हैं। योरुप के ईसाई अथवा यहूदी लेखकों ने जो इण्डोयोरुपियन अथवा इण्डो-जर्मनिक भाषा कल्पित की है, उसका कभी अस्तित्व नहीं रहा। हमारे पक्ष के समर्थन में दो प्रधान कारण हैं। प्रथम हमारा इतिहास महाराज विक्रम से पांच छः हजार वर्ष पूर्व की मध्य एशिया, योरुप और भारत की पुरातन जातियों का पता देता है। उन सब की भाषाओं का हमें अब भी यत्किञ्चित् ज्ञान है। उन भाषाओं में इस कल्पित भाषा का कोई स्थान नहीं है। ईसाई और यहूदी लेखकों ने, इस भय से कि वेदमन्त्र और संस्कृत भाषा अति पुरातन सिद्ध न हो जाएं और संस्कृत भाषा का प्रभुत्व संसार पर अंकित न हो जाए, इस निस्सार वाद को प्रचरित किया। दूसरा इस कल्पित भाषा के अस्तित्व के साधन में भाषा विज्ञान के कई नियम जो योरुपीय लेखकों ने बनाए वे एकदेशीय, अवैज्ञानिक और विद्या-विरुद्ध हैं। उदाहरणतः जैसे वर्णमाला के प्रत्येक वर्ग का दूसरा और चौथा अक्षर उत्तरोत्तर भाषाओं में पहले और तीसरे अक्षर का रूप धारण नहीं करते, और न हकार को वर्ग के दूसरे अथवा चौथे अक्षर का रूप मिलता है। ईसाई लेखकों ने इस नियम के मूल को भारत नाट्य शास्त्र (भारत युद्ध से २००० वर्ष से पूर्व) अध्याय १७ से चुराया है। उदाहरणतः संस्कृत में हंस शब्द का जर्मन में गंज और अंग्रेजी में गूंज रूप हुआ है। लेख विस्तारभय से हम इतना ही बतलाना चाहते हैं कि बोलियों अथवा ग्रामीण बोलियों से भाषा नहीं बनी बल्कि भाषा, शिष्ट भाषा अथवा साहित्यिक भाषा से अपभ्रंश होकर बोलियां बनी हैं।

वेद, उपनिषद, ब्राह्मण, आरण्यक, मनुस्मृति, बाल्मीकि रामायण, महाभारत आदि आर्ष ग्रन्थ ज्ञानपुंज हैं। यही ग्रन्थ भारतीय संस्कृति के संवाहक, संरक्षक हैं। वस्तुतः संस्कृति का यही अक्षुण्ण प्रवाह इन संस्कृत, संस्कृति विरोधी मानसों को सबसे अधिक अखरता है। संभवतः यदि हम संस्कृतज्ञ अब भी जाग्रत नहीं रहे तो इस देश की सनातनी संस्कृति के ये आक्रान्ता सिन्धु घाटी की सभ्यता से जुड़े उत्खनन से प्राप्त वस्तुओं को मेसोपोटामिया की संस्कृति से जोड़कर देखते रहेंगे तथा जीवनभर भारतीय इतिहास की साम्यवादी व्याख्या करते रहेंगे।

ब्र. राजसिंह व आचार्य राजकिशोर दिवंगत

आर्य नेता ब्र. राजसिंह जी (दिल्ली) के देहावसान (5 जनवरी, 2015) के 2-3 दिन बाद ही गुरुकुल शादीपुर (यमुनानगर) के त्यागी, तपस्वी, ब्रह्मचारी आचार्य श्री राजकिशोर जी का 7 जनवरी 2015 को निधन हो गया। आचार्य श्री का पावन स्मरण हमें सदा प्रेरणा देता रहेगा। -राजेशार्य आट्टा

आज भी संस्कृत का सामान्य ज्ञान रखने वाले विद्वानों की संसार में कमी नहीं है, परन्तु पूर्वाग्रहों से ग्रस्त होने अथवा वैदिक भाषा तथा व्याकरण, निरुक्त आदि वेदांगों, न्याय वैशेषिक आदि उपांगों, शतपथ आदि व्याख्यान ग्रन्थों आदि के अध्ययन में पारंगत न होने से वे वेदों के रहस्यों अथवा गूढार्थों को समझने में असमर्थ हैं। इसके लिए अब समय आ गया है कि हम सभी अपनी पूरी शक्ति के साथ सम्पूर्ण भारतीय वाङ्मय का मन्थन करके निकाले गए तथ्यों के आधार पर संस्कृत विरोधी मानसों की भ्रान्त धारणा को धराशायी करते चलें। सारा संसार जानता है कि हमारे आर्ष ग्रन्थों में उन सभी तथ्यों का समावेश है, जिन पर आधुनिक विज्ञान आज शोध कर रहा है। आर्यभट्ट, वराहमिहिर, चरक, सुश्रुत ऐसे नाम हैं जिनके शोध पूर्ण कृत्यों से आर्यावर्त तो क्या समस्त विश्व ऋणी है। अपने देश के गौरव बिन्दुओं और उसकी समृद्ध अक्षुण्ण परम्परा को नकार कर कोई भी देश स्वाभिमान के साथ खड़ा नहीं रह सकता। क्या कारण है कि जहाँ विश्व की कई सभ्यताएँ काल के गाल में समा गई, वहीं हमारी सनातन सभ्यता अद्यतन चिरन्तन और नित नूतन है? इस थाती को भावी पीढ़ी तक पहुंचाने का काम संस्कृत ही कर सकती है। अतः देश में संस्कृत को अनिवार्य विषय घोषित कर दिया जाना चाहिए।

संस्कृत भाषा वस्तुतः ग्रीक, लैटिन, अंग्रेजी आदि सभी भाषाओं से अधिक सक्षम है। यह भाषा विविध उच्चारणों को अंकित करने में अधिक समर्थ है और अधिक गठित भी है। वर्तमान भाषाएं उच्चारण करने में सुगम और स्मरण करने में सुसाध्य तो हैं परन्तु न तो उनमें प्राचीन भाषा संस्कृत जैसा लालित्य है, न भावाभिव्यक्ति की क्षमता और न थोड़े शब्दों में बहुत कुछ कहने का सामर्थ्य। सभी दृष्टियों से संस्कृत भाषा ही युक्तियुक्त है। इसका सम्मान रहेगा तो यह देश इसकी बदौलत विश्व के पथ को भी आलोकित करता रहेगा।

संस्कारित पुत्री का प्रतिभा-प्रदर्शन

जयपुर : आर्य परिवार की संस्कारित पुत्री, मानसरोवर की सुश्री भारती शर्मा ने राजस्थान न्यायिक सेवा परीक्षा में ५४वां स्थान प्राप्त कर प्रतिभा प्रदर्शन किया है। सेवा निवृत्त बैंक अधिकारी श्री प्रेमकुमार शर्मा तथा आर्य-सत्संगी श्रीमती लता शर्मा की पुत्री सुश्री भारती वर्तमान में राजस्थान सरकार में कनिष्ठ विधि अधिकारी पद पर आसीन है। सुश्री भारती ने उद्‌गार प्रकट किये हैं कि अपनी योग्यता व पद का उपयोग समाज को त्वरित व सुलभ न्याय दिलाने में करेंगी। इस उपलब्धि का श्रेय माता-पिता एवं परिजनों के आर्शीवाद एवं वरिष्ठ शासकीय अधिकारियों को वे देती हैं।

ईश्वर दयाल माथुर सम्मानित

जयपुर एवं उपनगर सामाजिक संस्थाओ की गतिविधियों एवं समारोहों के समाचार प्रचारक, हिन्दी साहित्यकार-पत्रकार तथा मानसरोवर आर्यसमाज के उपप्रधान श्री ईश्वर दयाल माथुर का भारतीय जनता पार्टी (वरिष्ठ नागरिक प्रकोष्ठ) द्वारा समारोहपूर्वक सम्मान किया गया। भारतीय जनता पार्टी (वरिष्ठ नागरिक प्रकोष्ठ) के प्रदेश संयोजक, पूर्व पुलिस अधीक्षक नटवरलाल शर्मा के अनुसार समाजसेवा, समरसता एवं साहित्य क्षेत्र में योगदान हेतु ७८ वर्षीय श्री माथुर को राजस्थान सरकार के सामाजिक न्याय व अधिकारिता मंत्री श्री अरुण चतुर्वेदी ने शाल, प्रतीक चिह्‌न एवं माल्यार्पण से सम्मानित किया। सह संयोजक श्री नन्दकिशोर ने आगुन्तकों का स्वागत किया।

बड़ौत में मनाई देहलवी जी की पुण्यतिथि

बड़ौत- राष्ट्रीय वाचस्पति परोपकारिणी परिषद् तथा तर्कमार्तण्ड पं॰ रामचन्द्र देहलवी उपदेशक विद्यालय के तत्वाधान में ३१ जनवरी २०१५ से आर्य विवाह मंडप में २ दिवसीय सामवेद यज्ञोत्सव तथा तर्कमार्तण्ड श्रद्धेय पं॰ रामचन्द्र देहलवी शास्त्रार्थ महारथी पुष्पतिथि श्रद्धापूर्वक मनाई गई। यज्ञ के ब्रह्मा डॉ॰ श्री ओमवीरसिंह शास्त्री (नाड़ी रोग विशेषज्ञ, दिल्ली), वेदपाठी पं॰ अशोक शर्मा, श्री आलोक आर्य (रामचन्द्र देहलवी उपदेशक विद्यालय), श्री चन्दन सिंह वर्मा (सोनीपत) डॉ॰ रोहित सिंह (ई॰एन॰टी॰ मेरठ), डॉ॰ आजाद तोमर, गन्ना समिति चेयरमैन, चौ॰ रामकुमार सिंह खोखर, मा॰ घनश्याम सिंह, श्री नैन सिंह, प्रिं॰ सत्यव्रत राणा, रामफल तोमर, धमेन्द्र वर्मा, मनोज कुमार, प्रवीण कुमार वर्मा (शाहदरा), डा॰ सुरेन्द्र सिंह तोमर, श्री धर्म प्रकाश वर्मा (अध्यक्ष स्वर्णकार समाज बड़ौत) तथा राष्ट्रीय वाचस्पति परोपकारिणी परिषद् के यशस्वी राष्ट्रीय अध्यक्ष व उपदेशक विद्यालय के अधिष्ठाता धर्माचार्य धनकुमार शास्त्री ने श्रद्धेय पं॰ देहलवी का पुण्य स्मरण किया। सभी वक्ताओं ने उनके कार्यों तथा पांडित्य की भूरि प्रशंसा की।

राष्ट्रीय अध्यक्ष ने आर्यसमाज के स्वर्णिम काल को याद करते हुए बताया कि जब उपदेशक और भजनोपदेशक सिंहगर्जना करते थे, उस समय विधर्मी भूमिगत हो जाते थे। आज आर्यसमाज में सैद्धान्तिक तत्त्व-मर्मज्ञ उपदेशकों का अभाव है। कर्तव्यनिष्ठ चरित्रवान उपदेशकों की विशाल सेना इस चुनौती का मुकाबला कर इस अभाव को दूर कर सकती है। कार्यक्रम में गणमान्य सज्जनों तथा नगर निवासियों को बड़ी संख्या में पधार कर अपनी श्रद्धा व्यक्त की।

विश्व बंधु आर्य का देहावसान

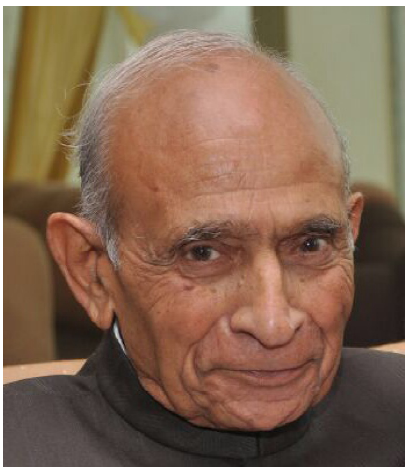

आर्यवीर दल के सक्रिय सदस्य और आर्यसमाज के नेता श्री ओम प्रकाश त्यागी तथा लाला रामगोपाल शालवाले के निकट सहयोगी, विश्व बंधु आर्य का दिनांक 27 नवंबर 2014 को निधन हो गया है। वे आर्य वीर दल की शाखाओं के मुज़्य अनुदेशक रहे थे और उन्होंने आजादी से पहले 1946 में नोआखली, पूर्वी बंगाल में हिंदू मुस्लिम संघर्ष के दौरान सद्भावना कायम करने तथा राहत कार्य करने के लिए आर्यसमाज की ओर से सक्रिय रूप से हिस्सा लिया था। सन् 1966 में गौ रक्षा आन्दोलन के दौरान उन्होंने आर्यसमाज दीवान हॉल, चांदनी चौक, दिल्ली से आन्दोलन का सफलतापूर्वक प्रबंधन किया था। वे आर्यसमाज दीवान हॉल के मंत्री के रूप में चुने गए थे। सेवानिवृत्त होने के बाद उन्होंने सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा को सेवाएं प्रदान कीं। वे अपने पीछे अपनी पत्नी तथा तीन पुत्र और तीन पुत्री छोड़ कर गए हैं जो सभी ईश्वर की कृपा से सज़्न्न हैं।

-डॉ0 देवेश गुप्ता पुत्र श्री विश्व बंधु आर्य

मस्ताना

तरत्स मन्दी धावति धारा सुतस्यान्धसः।
तरत्स मन्दी धावति।।4।।

ऋषिः- अवत्सारः-निर्मोह, प्रेममय, सन्तुष्ट।

व्याज़्याकार : आचार्य पण्डित चमूपति जी

(सतुस्य अन्धसः) ईश्वर की आराधना से उत्पन्न हुए प्राण-प्रद सोम-रस की **(धारा)** धारा से **(स मन्दी)** मस्त हुआ वह मस्ताना **(तरत्)** तैरता-सा **(धावति)** दौड़ता है। **(स मन्दी)** वह मस्ताना **(तरत्)** तैरता-सा **(धावति)** दौड़ता है।

देखना! प्रभु के भक्त की चाल-ढाल को एक दृष्टि देखना! वह मस्ताना है- दीवाना है। उसने कुछ पी-सा रखा है। वह मानो किसी समुद्र की धार पर सवार है। बहा-सा जाता है। बिना पानी के तैर रहा है। उसकी गति में, कैसी स्फूर्ति है। भक्त संजीवनी का पुतला-सा लगता है। जब आस-पास के लोग आलस्य की नींद सो रहे होते हैं, वह अकेला जागता है और दौड़ता है। भागे बिना उसे चैन नहीं। निरंतर भाग रहा है। आज यहाँ था, कल वहाँ। उसका सज़्पूर्ण जीवन एक आन्दोलन है। वह रुके कैसे! सुस्ताये क्यों! वह थकता तो है ही नहीं। चलने में उसे परिश्रम नहीं होता। उसे तो एक जीवन-प्रद आनन्द की धार बहाये लिये जाती है। उसके बाहु हिलते हैं, जैसे पतवारें। उसका शरीर नौका-सा आगे-आगे उठा जाता है। जिस रस का उसने सवन किया है- उसे खींचा है फिर पिया है, उसकी लहर सी उसे बहाये चलती है। रस के थपेड़ों में वह मछली-सा तैर रहा है। उसकी भुजायें मानो तरंगें-सी बन रही हैं। उसकी टाँगे उठती नहीं, चलती नहीं, बहती हैं। गति उसके शरीर का धर्म हो गया है। उसका योग-क्षेम प्रभु ने अपने ऊपर ले लिया है। उसे चिंता काहे की? वह अपनी शक्ति से नहीं, जगज्जननी की शक्ति से चलता है। वह थके कैसे? उसके हृदय में उल्लास है। मन में साहस है, उत्साह है। भक्ति के नशे में वह मस्त है। अन्य नशे जीवन के नाशक हैं। यह नशा स्वयं संजीवनी है। इस नशे की धार में, धारण की अद्भुत शक्ति हैं। इसका मस्ताना लड़खड़ाता नहीं, दौड़ता है।

इस संजीवन प्राण का सवन साधारण प्राणों द्वारा ही किया जाता है। भौतिक प्राण में आध्यात्मिक संजीवनी सामान्यतया प्रसुप्त-सी रहती है। भक्त इसे जगाता है। अपनी भौतिक शक्तियों से ही आध्यात्मिक रसों का सेवन करता है। फिर तो जैसे उसका सज़्पूर्ण शरीर ही अध्यात्म की लहर पर सवार हो जाता है। जैसे दुनिया के बन्दे को दुनिया की हवस लिये-लिये फिरती है, ऐसे ही 'मन्दी'-मस्ताने को उसकी मस्ती की लहर उठाये-2 फिरती है।

मेरे मन! तू मस्ताना हो, दीवाना हो। चल नहीं, चलाया जा। फिर नहीं, फिराया जा। चलाने की थकान चलाने वाले को होगी। फिराने का परिश्रम फिराने वाले पर पड़ेगा। तू मुज़्त में तैर लेगा, बह लेगा, दौड़ लेगा। तैरने का, बहने का आह्लाद अनायास तुझे मिल जायेगा।

सम्पादक, प्रकाशक, मुद्रक सहदेव द्वारा अपने स्वामित्व में, प्रियंका प्रिंटर्स पुरानी सब्जी मण्डी जींद के लिए ऑटोमैटिक ऑफसैट प्रैस रोहतक से छपवाकर, कार्यालय शान्तिधर्मी ७५६/३, आदर्श नगर, सुभाष चौक (पटियाला चौक), जीन्द-१२६१०२ (हरि०) से २४-०२-२०१५ को प्रकाशित।

स्व. पं. चन्द्रभानु आर्य : संस्मृतियाँ

जीन्द आर्य महासम्मेलन में स्वामी रामवेश जी, स्वामी ओमवेश जी व स्वामी आर्यवेश जी सम्मानित करते हुए।

जीन्द सम्मेलन में स्वामी ओमानन्द जी, स्वामी इन्द्रवेश जी, प्रो. शेर सिंह, आचार्य विजयपाल जी, चौ. सूबे सिंह आदि के साथ मंच पर।

हरियाणा स्वतंत्रता सम्मान समिति के अध्यक्ष पं. हरिराम आर्य को साहित्य भेंट करते हुए शांतिधर्मी कार्यालय में।

राष्ट्रीय वाचस्पति परोपकारिणी परिषद् की ओर से सम्मानित करते हुए आचार्य धनकुमार शास्त्री, डॉ. अशोक कुमार, अश्वनी कुमार आर्य।

केन्द्रीय आर्य युवक परिषद के राष्ट्रीय अध्यक्ष डॉ. अनिल आर्य से सम्मान ग्रहण करते हुए।

हरियाणा साहित्य अकादमी द्वारा अनुदानित 'भजन भास्कर' का विमोचन। आचार्य राजेन्द्र जी, स्वामी सोमानन्द जी, जयवीर आर्य आईएएस, प्रो. ओम कुमार आर्य।

ओ३म्

शांतिधर्मी के सदस्य बनने और शुल्क जमा कराने के लिए मिलें।

प्रकाश मेडिकल हाल

पटियाला चौक, जींद-126102

Regd. No. 108463

हर प्रकार की अंग्रेजी, देसी व आयुर्वेदिक दवाईयाँ
उचित मूल्य पर खरीदने के लिए पधारिए।

Dr. S.P.Saini
(B.Sc. D. Pharma, आयुर्वेद रत्न)

M- 93549 55283
92552 68315

ओ३म्

फोन : 01681-252606 (दु.)
9416545538 (मो.)

सत्यम् स्वर्णकार

हमारे यहाँ सोने व चांदी के जेवरात
आर्डर पर तैयार किये जाते हैं।

प्रो. सत्यव्रत आर्य सुपुत्र रमेश चन्द्र आर्य

नजदीक सत्यनारायण मंदिर, सुनार मार्किट,
मेन बाजार, जीन्द (हरि०)-१२६१०२